૫૭૪૨

ગુજરાતનાં મેળા

५७४२

॥ ॐ ॥

महर्षि श्री सुखदेवजी प्रणीत,

अध्यात्मप्रकाश भाषांतर.

" आध्यात्मिक वैद्यलीला " तथा
विशाला नामनी टीकासहित.

रचनार

महाशय श्री नृसिंह शर्मा.

प्रसिद्धकर्त्ता.

कहानजी धर्मसिंह.

मुंबई:
" कर्णाटक " मुद्रालय.

संवत् १९५४ ई. स. १८९८.

मूल्य १० आना.

(पद–काफी.)

ज्यौंलौ अनुभव ज्ञान रे, घटमें प्रगट भयो नहीं, ज्यौंलो०

(टेक)

तौंलौ मन थिर होत नहीं छिन, जिम पीपरको पान;
वेद भण्यो पण भेद न जान्यो, पोथी थोथी ज्ञान रे. घटमें० १
रस भाजनमें रहत द्रव्य नित्य, नहीं तस रस पहिचान;
तिम सुक पाठित पंडितकुं पण, प्रवचन कहत अज्ञान रे. घटमें०२
सार लह्या विण भार कह्यो श्रुत, खर दृष्टांत प्रमाण;
चिदानंद अध्यात्म सैली, समज परत एक तान रे. घटमें० ३

(अध्यात्म-भजनमाला.)

(दोहा.)

जय जय जशवतसिंहजी, निंबपुर महाराज;
धर्मवीर दानेश्वरी, तपो निरंतर ताज. १
कवि कोविदना कल्पतरु, सज्जन शांतिस्थान;
प्रतापभानू भूपरे, भूपति भोज समान. २
नीति-भक्ति-प्रीतितणा, पोषक परम उदार;
क्षत्रीवट जुस्सो छतां, क्षमा खडग तैयार. ३
कर्यो युरोप प्रवास पण, स्वदेश ऊपर प्रेम;
कर्या सुधारा शोभता, प्रसन्न जन रहे जेम. ४
विद्यानी वृद्धि थवा, स्थापी शाळ विशाळ;
आपी सरस सहायता, आपे थई कृपाळ. ५
दवादान अन्नदान ने, वस्त्रदान गोदान;
देता विद्यादान ते, सदा सहित सन्मान. ६
दीन दुखी सुखिया थई, नित आपे आशीष;
जश जशवंत तणा भणे, रघुनाथी दिननीश. ७
अंग्रेजी गीर्वाणनुं, अति उत्तम छे ज्ञान;
विकट विश्व व्यवहारमां, पाम्या मान महान. ८
तत्वमसि महावाक्यनो, त्रिपद अर्थ गंभीर;
जाणो छो अभ्यासथी, आप विवेकी वीर. ९
गीता उपनीषद अने, सकळ शास्त्रनो सार;
श्रवण मनन मनथी करी, वर्तो छो निर्धार. १०
तेथी अर्पुं आपने, आ "अध्यात्मप्रकाश;"
अधिकारी अधिराजने, धरि उरमां उल्लास. ११
जिज्ञासु ज्ञानी भला, जशवंतसिंह नरेश;
जश जय जगमां पामजो, कान विशेष विशेष. १२

भूमिका.

अध्यात्म प्रकाश एटले आत्मतत्त्वनो प्रकाश. आत्मतत्त्वनो प्रकाश ए ज आ ग्रंथनो विषय छे. ए विषयने उद्देशीने ज ग्रंथकर्त्ताए आ ग्रंथनुं नाम "अध्यात्मप्रकाश" राखी, एमां अधिकारीजनोना कल्याणअर्थे सरल पदोमां वेदांत प्रक्रियाओने गोठववा परिश्रम लीधेलो छे. पदबंध होवाथी मुमुक्षुओने प्रक्रियाओ मुखस्थ करवानुं पण ठीक पडे, ए वार्ता सर्व संमत छे. वळी शास्त्रार्थेथी भरेला ग्रंथो प्रथम प्रवेशकने क्लिष्ट लागे छे, तेथी स्पष्टतापूर्वक वादविवादना प्रपंचमां पडवानुं मूकी दई, ग्रंथकारे तेम ज टीकाकारे विषयनुं निदर्शन मात्र ज करावेलुं छे. कारण के केटलाक ग्रंथकारोनो मत एवो छे के,—विषयनी गहनता—क्लिष्टता प्रमाणे भाषा पण तेवी ज वापरवी; अने केटलाक ग्रंथकारो तथा टीकाकारोनो मत एवो छे के,—जो विषयनी काठिन्यता होय तो भाषा सरल वापरवी. जेम के न्यायशास्त्रना विषयो जेवा क्लिष्ट छे, तेवी ज तेनी भाषा पण क्लिष्ट छे. आम थवाथी मूळ विषय समजवानुं तो एक कोरे रह्युं, परंतु तेनी भाषा पण समजी शकाती नथी. तेवी ज रीते जो वेदांतना ग्रंथोमां पण करवामां आवे ने तेमां पण वळी जे ग्रंथोथी प्रक्रियाओ समजाववी होय, तेमां पण जो तेम करवामां आवे तो अधिकारीओ उपर ओछो उपकार थवा संभावना रहे छे. ग्रंथकार प्राचीन अने टीकाकार नवीन छतां, बेउना विचारो आ बाबत जाणे समान न होय ए जोतां बहु संतोष उपजे छे.

आ ग्रंथमां कांई वेदांतनी समस्त प्रक्रियाओनो समावेश करवामां आवेलो नथी; परंतु मात्र सामवेदनां महावाक्य **'तत्वमसि'**-नां **तत्-त्वं** अने **असि** ए त्रण पदनां स्वरूप बतावी, जीवात्मा-परमात्मानो अभेद दर्शाव्यो छे, अने तेना अंतर्गत आवेला प्रसंगानुसार प्रक्रियाओ पण जणावी छे.

मुमुक्षुओने आ ग्रंथ अवश्य श्रवण—मनन करवा योग्य छे एटलुं ज नहि, पण एथी तेने अति उपकार थवानो संभव छे. **तत्वमसि** ए महावाक्यनां यथार्थ ज्ञाननी मुमुक्षुओने विशेष अगत्य छे; कारण के चार महावाक्यमां महावाक्यता (तत्वसाक्षात्कारपणुं होवाथी) **तत्वमसि** वाक्यने विशेष ज वास्तविक रीते घटे छे. केमके सिद्धांतमां एक एवो नियम छे के जेनावडे अपरोक्ष ज्ञान थाय ते ज महावाक्य कहेवाय; के जेथी करी परोक्ष ज्ञान ज थाय छे. तो अपरोक्ष ज्ञान थवामां **तत्वमसि** ए महावाक्यने ज कारणता छे; केमके **प्रज्ञानब्रह्म** तथा **अयमात्मा ब्रह्म** ए वाक्योवडे जे ज्ञान थाय छे ते ज्ञान परोक्ष छे; कारण के तेनाथी तत्वसाक्षात्कार थतो नथी, एटले तेने अवांतर वाक्य कहे छे. अने **तत्वमसि** तथा **अहंब्रह्मास्मि** ए वाक्योवडे जे ज्ञान थाय छे, ते अपरोक्ष छे; कारण के तेनाथी साक्षात्कार थाय छे एटले तेने महावाक्य कहे छे. **अहंब्रह्मास्मि** ए ज्ञान थवामां पण **तत्वमसि** वाक्यने कारणता छे, तेथी खरेखरी अपरोक्षानुभूति थवामां कारणभूत **तत्वमसि** ज छे. एनो स्पष्टार्थ आ ग्रंथमां सुंदर रीते करेलो होवाथी, अधिकारीजनोने आ ग्रंथ अति प्रिय थई पडशे, एवी पूर्ण आशा छे.

क. ध.

अनुक्रमणिका.

(पद–धन्याश्री.)

साचुं हरिनुं नाम, भाई, साचुं हरिनुं नाम.

खोटी काया खोटी माया, खोटां धन सुख धाम;—भाई० १

साच तजीने खोटां माटे, भटके तुं शुं काम?—भाई० २

ठाला आव्या ठाला जावुं, अंते ठालुं ठाम;—भाई० ३

प्रभुभजन भवसागर तारे, पण तेनुं नहिं भान;—भाई० ४

घडि पलकनो नहिं भरुंसो, कान रटि ले राम;—भाई० ५

(कहानकाव्य.)

५७४२

॥ ॐ ॥

श्रीअध्यात्मप्रकाश भाषांतर.

व्याख्यानो प्रारंभ.

(दोहा.)

श्री सद्गुरुकुं नमन कर, वंदूं संतसमाज ॥
अरु शारद नारदमुनि, विघ्नहरन गनराज ॥ १ ॥
चिदाभास अध्याससें, मैं मतिमंद सुजान ॥
सो अध्यात्मप्रकाश यह, सुखकर सहित प्रमान ॥ २ ॥
संशोधी भाषा सकल, टीका करत विशाल ॥
जिन जानी गुर्जर जनों, मुदित होइ मन भाल ॥ ३ ॥
सत्यहि ज्ञान अनंत अरु, निक्रिय निष्कल छेक ॥
निर्विशेष अद्वय वही, ब्रह्म उपासत एक ॥ ४ ॥
सबें उपासे वाहीकों, पावे सुखभंडार ॥
सो कारन यह ग्रंथकी, टीका करत बिचार ॥ ५ ॥

आ अविद्याग्रस्त अनादि संसारनेविषे जन्ममरणमयी चोराशी लक्ष योनीओरूपी रेंटमाळमां वारंवार भ्रमण करनारा जीवो, स्वकर्म प्रभावानुसार अनेक भोगोने भोगवता, वारंवार माता, पिता, बंधु, बेन, स्त्री, पुत्र, पशु, धन, धान्य, घरा आदिक पदार्थोने मेळवताज रहे छे; परंतु तेमां शोचनीय मात्र एटलुंज छे के ते सघळा पदार्थो

बंधना हेतु छे. पण मोक्षना हेतुरूप अज्ञानांधकारनो नाश करनारा, दयाना सिंधु, कृपाना सागर, ममत्वने मटाडनारा, अहंताथी अळगा करनारा, सद्गुणना दाता,—एवा परम कारुणिक श्री सद्गुरुनो मिलापज आ जगत्मां अति दुर्लभ छे. धन्य छे ते पुरुषोने के जेओ सद्गुरुश्रीना शरणने पाम्या छे! आ संसारसमुद्रथी तारनार केवळ सद्गुरुज छे; वास्ते प्रथम श्री. सद्गुरु महाराजनां पवित्र पदपंकजने विषेज सविनय नमन करूं छुं. वळी संतजनो, जे के पवित्र भूमिमां भ्रमण करी जीवोनुं कल्याण करवामां तत्पर रहेता थका ज्ञानामृतनी वृष्टी वर्षाविताज रहे छे, तेमने पण सविनय वंदन करुं छुं. वाणीनां अधिष्ठाता श्री शारदांबा (नारं=ज्ञानं, ज्ञानं ददातीति नारदः) ज्ञानने आपवावाळा एवा आदिमुनि तथा विघ्नध्वंस करवावाळा श्री गौरीनंदन—गजाननने पण वारंवार सविनय वंदन करूं छुं.

हुं चिदाभास—अंतःकरणमां पडेलुं आत्मानुं जे प्रतिबिंब, ते बिंबथी भिन्न नथी, तेथी साक्षात् चिद्रूप तथा सर्वज्ञ छुं छतां, अध्यासवडे करीने पोताने मंदमति जीवरूपे मानी, असर्वज्ञत्वादि दोषोनो मिथ्या स्वीकार करी बेठेलो छुं. ते संत शिरोमणि श्री सुखदेवजी विरचित आ "अध्यात्मप्रकाश" नामना भाषा ग्रंथनी भाषानुं संशोधन करी, गुर्जर भाषामां "विशाला" नामनी व्याख्या लखुं छुं. "संशोधन" शब्द वापरी, कर्त्तानी भाषा दूषित छे एम लखवा अशक्त छूं; परंतु परंपराथी लखाई आवतां थयेला हस्तदोषनुं नि-

धारण मात्र यथाशक्ति करवामां आव्युं छे. वेदांतविषयमां गुजराती भाषामां ग्रंथो थोडा छे, तथा भाषा ग्रंथो समजवामां ते देशना साधारण मनुष्योने प्रयत्न पडतो अनुभव थाय छे. विषय कठिण ने भाषामां पण आ ग्रंथ पद्यात्मक होवाथी, वस्तुज्ञान थवामां सरलता थाय, तेवास्ते व्याख्या लखवानी जरूर धारी छे. ग्रंथकारनुं लखवुं सप्रमाण तथा अनुभवनुं छे, तेथी आशा रखाय छे के स्वदेशबांधवो आ ग्रंथ वांची विचारीने तन मनथी प्रसन्न थशे.

वळी त्रिकाळाबाध्य सत्यस्वरूप, ज्ञानस्वरूप, जेनो अंतज नथी एवां, निष्क्रिय, निष्कल, निर्विशेष, तथा अद्वितीय एवां ब्रह्मनीज निजांतरनेविषे उपासना करुं छुं. ए ब्रह्म अक्षय सुखनुं आस्पद छे; तेथी सुखने इच्छवावाळां प्राणिओ विषयजन्य मिथ्या सुखनेज सुखास्पद मानी, तेना मोहमां न फसतां, अन्यनी उपासना (पुनर्जन्मनी हेतु होवाथी) तेनो त्याग करी, केवळ अंतरात्मा जे के सच्चिदानंदघन स्वरूप छे, तेनीज उपासना करी, सुखना अखूट भंडारने पामी, विषयोनी विविध प्रवृत्तिथी अटके, तेटलीज इच्छामात्रथी आ ग्रंथनी विचारपूर्वक विशाला नामनी व्याख्या लखवा प्रवृत्ति थई.

(सवैया.)

स्थावर जंगम जीव जिते जग भांतिन भांतिन भेष धरे है ॥
तामहिं सच्चिद आनंदरूपसुं आतम एक प्रकाश करे है ॥
जो बिन जानत सिंधुहि लागत जानत गोपद तुल्य तरे है ॥
बंदित ताहि कहे सुखदेव सुब्रह्म सदा सबतैंहि परे है ॥१॥

आ विश्वरूपी रंगभूमिना उपर विर[illegible]ी समष्टि जीवे, व्यष्टिरूपे विविध प्रकारना स्थावर जंगमात्मक वेषो धारण करेला छे. जेनाथी जे उत्पन्न थाय छे ते ते रूपज होय छे; जेमके घडो, हांडली, तावडी, कोडिउं इत्यादी माटीथी उपजेलां होई माटीरूपज छे. यद्यपि नामरूपथी ते सघळां भिन्न भिन्न छे, तथापि तेमना सर्व अवयवने विषे माटीज प्रकाशी रही छे. ए न्यायथी आ विचित्र विश्व, ब्रह्मथीज उपजेलुं होई ब्रह्मरूपज छे. जो के नामरूपथी भिन्न भिन्न जणाय छे, तो पण ते सघळामां एक सच्चिदानंदस्वरूपी आत्मा ब्रह्मज प्रकाश करी रहेल छे. वास्तविकताथी एक ब्रह्मथी अतिरिक्त बिजो कोई पदार्थज नथी. परंतु ज्यांसुधी भेददृष्टी छे, त्यांसुधी आ सृष्टि नहि छतां पण भ्रांतिमात्रथी भासमान् थाय छे. जेवी रीते दोरडीमां वास्तविकताथी सर्प त्रणे काळमां नथी, छतां वर्तमानकाळमां जणाय छे, ते कोई पण दोषविशेषने लईनेज. पण ज्यारे अभेद दृष्टीथी (तेवी दृष्टी प्राप्त थए) जोवामां आवे छे, त्यारे स्पष्ट जणाय छे के मिथ्या एवां जे नामरूप छे, तेनो त्याग करीए छीए तो अस्ति, भाति, अने प्रिय—सच्चिदानंद एक आत्माज प्रकाशी रहेला छे. एनां—आत्मानां ज्ञानविना आ संसारसमुद्र अतीव दुस्तर लागेछे ने आश्चर्य उत्पन्न थायछे के “ एते आत्मानुं विलक्षण स्वरूप केवुंक हशे! अने हूं एवो सर्वांतर्यामी तथा सर्वव्यापक आत्मा केम होईश ? ” परंतु ज्यारे सद्गुरु अने सत्शास्त्रद्वारा ए आत्मानुं

यथार्थ ज्ञान थायछे, त्यारे समुद्रसमान जणातो संसार गोपद—गायनां पडेल पगलामां भराई रहेलां पाणीनां खाबोचीआंना जेवो सुगम लागेछे. वळी ए आत्मा सर्व थकी पर छे. (ब्रह्मथकीपर—श्रेष्ठ कोईज नथी एम श्रृति भगवती पण कहेछेः—पुरुषान्न परं किंचित् साकाष्ठा सापरागतिः) एवो जे सर्वथी श्रेष्ठ एकरस चैतन्यघन स्वरूपी आत्मा छे तेने सुखदेवजी कहे छे के अभेददृष्टिवडे वंदन करुं छुं.

ग्रंथना आदिभागमां मंगलाचरण करवुं, ए शिष्टसंप्रदाय होवाथी ग्रंथकारे वस्तु निर्देशात्मक तथा नमस्कारात्मक मंगलाचरण करेलुं छे. ए मंगलाचरण त्रण प्रकारनुं कहेवाय छेः आशीर्वाद, नमस्कार अने वस्तुनिर्देश भेदथी. विघ्नध्वंस अने ग्रंथनी परिसमाप्तिनी इच्छावाळा पुरुषोए मंगलाचरण अवश्य करवुं जोइये. "मंगलाचरण मनमांज करी लेवुं हतुं लखवानुं शुं प्रयोजन ?" एवी शंका करवी नहि. केमके लेखित होवाथी शिष्यपरंपरामां प्रमाणभूत थई, ए विषय शिष्टाचार छे एवुं ज्ञान रहे, ते वास्ते शिष्टो ग्रंथारंभमां लिखित मंगलाचरण करे छे.

(दोहा.)

व्यास मथन करि वेद सब, सूत्र निकारे सार ॥
श्रीगुरु शंकर देवजुं, कीनो बहु विस्तार ॥ २ ॥
तिन ग्रंथनको संक्षिमत, हियधरि परउपकार ॥
भाषा कर सुखदेव यहु, रच्यो ग्रंथ अति चारु ॥ ३ ॥

परमकृपाळु महामुनि श्री व्यास भगवाने सघळा वेदोनुं मथन

करीने तेमांथी शारीरिक सूत्रो नामनो ग्रंथ साररूपे प्रसिद्ध कर्यो, अने तेना उपर श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य भगवत्पूज्यपाद श्रीमत् शंकराचार्यजीए विस्तारपूर्वक भाष्य रच्युं. परंतु ए ग्रंथो संस्कृत भाषामां होई घणा कठिन होवाथी मंदबुद्धि मनुष्योने समजवा भारी पडे तेवा छे; एवूं स्वात्मानुभवथी, समजीने तथा मंदबुद्धिवाळा अधिकारी जनोना उपकारने अंतःकरणमां लावीने, तेमने बोध थवामाटे साररूपे आ अति सुंदर ग्रंथ भाषामांज श्री सुखदेवजीए ग्रथित कर्यो. एथी ग्रंथारंभनी साफल्यता दर्शावी, एटलुंज नही पण पोतानी उदारबुद्धिनुं पण दर्शन कराव्युं.

शिष्यगुरू संवादमिस, वेदवचन इतिहास ॥
भाषा सरल सुदेशकी, यहि अध्यात्मप्रकाश ॥ ४ ॥
अधिकारी जिज्ञासुजन, शिष्य कहावत सोय ॥
तप साधन कर देहके, पाप निडारे धोय ॥ ५ ॥

आ "अध्यात्मप्रकाश" नामक ग्रंथना अंदर विस्तारपूर्वक वर्णित कराएलो वेदांतविषय शिष्यगुरुना संवादरूपे छे; तेम करवामां हेतु मात्र ए छे के, शंका तथा समाधाननां स्वरूप बांधवामां सरलता जणाय. प्रमाणमां वेदनां श्रुतिवचनो तथा दृष्टांतमां इतिहासनां वचनो यथामति प्रसंगोपात आपवामां आव्यां छे; तथा भाषापण आर्यावर्तमां चालती, साधारण सर्व देशना लोको समजी शके तेवी वापरवानां बनतो प्रयत्न करेलो छे.

साधनसंपन्न थई अधिकारने प्राप्त करी चुकेलो एवो जे पूर्ण जिज्ञासु छे, अने मन, वाणी तथा इंद्रियोनो निग्रह करी तपसाधना वडे तेमज नित्य-नैमित्तिक कर्मो वडे करीने जेणे पापरूपी मेलने धोई नांखी अंतःकरण स्वच्छ, निर्मळ करेलुं छे, ते सत्शिष्य कहेवाय छे.

जैसें रविके तेजतें, अंधकार मिट जाय ॥
त्यौं "अध्यात्मप्रकाश" तैं, मिथ्या ज्ञान नसाय ॥ ६ ॥

जेवी रीते सूर्यना प्रकाश वडे करीने ब्रह्मांडमांनो अंधकार नाश पामे छे, तेवी रीते आ "अध्यात्मप्रकाश" नामना ग्रंथनो विचार करवा थकी अध्यात्मप्रकाश प्रकटी, पिंडमांनो अंधकार नाश पामे छेः एटले के मिथ्याज्ञाननी हानी थाय छे; मिथ्याज्ञाननी हानी थयेथी अंतःकरणने विषे रहेला मळ, विक्षेप तथा आवरणादि दोषो मटे छे; ए दोषोना मटवाथी तत्त्वज्ञान थाय छे; तत्त्वज्ञान थयेथी कर्मनी प्रवृत्ति अटके छे, अने कर्मनी प्रवृत्ति अटकवाथी जन्मरणादि बंधनी निवृत्ति अने परमानंदनी प्राप्ति थाय छे.

(छप्पय.)

वेद स्मृति जो कहे, धर्म शुभकर्म क्रियाकों ॥
जन्म जन्मके पाप, धोय तिन करी हियाको ॥
फल अभिलाषा छांड, कर्म हरिप्रीति करे सबै ॥
हृदय बिमल अति होइ, होइ वैराग्य जबै तब ॥
श्रुति युक्ति सहित उपदेश गुरु, करे शिष्य हियमें धरे ॥
विज्ञान सहित सुखदेव कहि, प्रकट ज्ञानमार्ग लहे ॥७॥

वेदमां तथा स्मृतिमां कहेला शुभधर्म तथा शुभकर्मनी क्रियाओने करी करीने जन्मजन्मनां पापोने जेणे धोई नांखीने हृदयने शुद्ध करेलुं छे एवो, कर्मफलनी आकांक्षानो त्याग करी केवळ परमेश्वर प्रीत्यर्थे तथा नास्तिकताना दोषोना परिहारार्थे अने लौकिक परंपरा जाळववाने अर्थे वेदविहित सघळां कर्मोने करतो रहे एवो, अति तीव्र वैराग्य वडे करीने अंतःकरण विमळ थयुं होय एवो तथा श्रुति, युक्ति, अनुभववडे श्री सद्गुरु जे कांई सदुपदेश करे तेने श्रद्धापूर्वक हृदयमां धारण करे एवो, उत्तम अधिकारी शिष्य विज्ञान सहित ज्ञानने पामे छे.

(कुंडलिया.)

जैसें बरषा पाइके, जोते खेत किसान ॥
त्यौं प्रारब्धहि पाइके, देहि सुकर्म निजान ॥
देहि सुकर्म निजान, खैच इंद्रिय मन शोधे ॥
बोवे बीज उपदेश, वेदवचन गुरु बोधे ॥
तब उपजे दृढ ज्ञान, रीति खेतीकी ऐसें ॥
अनुभव फल तब होई, कहे सुख मारग जैसें ॥ ८ ॥

मन मानतो वर्षाद थवाथी खेडुतो खेतर खेडीने तेना अंदर बीज वावी यथाप्रारब्धफळने उत्पन्न करे छे, तेवी रीते पूर्वमां जेनुं कल्याण थवानुं छे, एवो अधिकारी पुरुष, सारां प्रारब्धने पामी स-

---

१ सतूशास्त्र तथा सद्गुरुथी थयेलो बोध ते ज्ञान अने त्यारपछी पोताना अनुभव वडे थएलो बोध ते विज्ञान.

त्कर्मने विषे प्रवर्तमान थाय छे; अने दिन दिन प्रत्ये साधनसंपन्न थई इंद्रियोनो निग्रह करी, मनरूपी खेतरमांथी विविध विषयोरूपी कचरो काढी नाखी क्षेत्रनुं संशोधन करे छे; अने त्यारपछी सद्गुरुए उपदेश करेलां एवां वेद्‌वचनोरूपी बीजने, तेमां वावे छे; अने ज्यारे अभ्यास तथा वैराग्यरूपी जळनुं सिंचन करीने तेमां थतां ज्ञानरूपी धान्यनुं कामक्रोधादि पशुओथी रक्षण करेछे, त्यारे तेमां अनुभवरूपी फळो उत्पन्न थाय छे; अने ते वडेकरी क्षेत्रज्ञ, आनंद्‌पूर्वक पोते पोतामांज संतुष्ट रही जेवी रीते अत्यंत सुख थाय तेवी रीते वर्ते छे.

(दंडक-धनाछरी.)

इंद्रिनकौं जीतौं तव, खैंचि कियो हाथ मन ॥
पर उपकारलौं तन भाईयतु है ॥
वेदके वखानवेकौं भेदग्रंथि भानवेकौं ॥
सारासार जानिवेकौं रूप गाईयतु है ॥
एक रूप पहिचानो सबहिमें सोई जानो ॥
आपतें न दूजो मानो सोचि माईयतु है ॥
ईश्वरलौं धावै, हिय भक्तिकौं दृढावै ॥
जब ऐसो गुरु पावे तापें ज्ञान पाईयतु है ॥ ९ ॥

इंद्रियोनो निग्रह करीने जेणे मनने पोताने स्वाधीन करेल छे एवा, परोपकारने वास्तेज जेणे शरीर धारण करेल छे एवा, वेदनी प्रसिद्धि इच्छावावाळा, भेदग्रंथिनो नाश करनारा, सारासार जाणवावास्ते निशदिन स्वस्वरूपनुं जेणे गान करेलुं छे एवा, स्वस्वरूपनुं ज्ञान थ-

एलुं होवाथी सर्वनेविषे आत्मदृष्टि छे एवा तथा एक आत्मामांथी अतिरिक्त अन्य कोइज नथी, एम जेणे विचारपूर्वक निश्चय करेलो छे एवा, तथा श्रीशपदने पामेला छे एवा अने शरणागत थएला शिष्यना हृदयना अंदर निर्मळ तथा सत्यभक्तिने स्थिर करे एवा सद्गुरुने पामे, त्यारेज आत्मज्ञाननी उत्पत्ति थाय छे.

(दोहा.)

गुरुसौं पूछे शिष्यकरि, नमस्कार धरि ध्यान ॥
नीकेकैं मोसौं कहो, कासौं कहिये ज्ञान ॥ १० ॥

ज्यारे उक्त लक्षणवाळा सद्गुरु प्राप्त थाय त्यारे शिष्य यथाशक्ति उपहार–भेट लई लईने सविनय साष्टांग दंडवत् प्रणाम करी ते दयाळु मूर्तिनुं अंतःकरणमां ध्यान धरे अने कुटिलतानो त्याग करी सरल हृदययुक्त थई तेमनी प्रसन्नता जोई प्रश्नो करे के;—हे प्रभो! आ 'ज्ञान ज्ञान' सहु करे छे, तो ए ज्ञान ते शी वस्तु छे, हुं कोण छुं, आ जगत कोण छे, ब्रह्म कोण छे, हुं बंधन केम पाम्यो छुं तथा मुक्त केम थईश? ते हे गुरो! कृपा करीने कहो. सत्पुरुषपासे ज्ञान मेळववानी इच्छावाळा अधिकारीए हाथमां भेट लईने जवाविषे श्रुति भगवती पण कहे छेः—**तद्विज्ञानार्थंसगुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्** ॥ श्रुतिना आशयने लईने स्मृतिरूपे श्रीकृष्णभगवाने पण अर्जुनना प्रत्ये चोथा अध्यायना श्लोक ३४ वडे कहेल छेः—

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यंति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥

ते ज्ञान तुं ज्ञानीओने प्रणाम करीने, वारंवार प्रश्नो करीने अने तेमनी सेवा करीने मेळव; एम करवाथी ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानी तने ए ज्ञाननो बोध करशे.

श्रुतिमां ब्रह्मनिष्ठ तथा श्रोत्रिय एवां बे विशेषणोयुक्त गुरुना शरणमां जवा सूचव्युं तेमां हेतु एवो छे के, जे केवळ ब्रह्मनिष्ठ होय छे. ते पोते तो पोतानी निर्मळ निष्ठावडे तरी थाय छे, परंतु पोतामां शास्त्रबळ न होवाथी ते अन्यना उपर उपकार करी शकशे नहि. केम के युक्तिरूपी शस्त्र हाथमां न होवाथी, सामाना संशयोनो उच्छेद थई शकतो नथी. वळी जे केवळ श्रोत्रिय हशे, ते पोतामां विविध शास्त्रोनुं बळ होवाथी युक्तिवडे करीने सामाना संशयोने दूर तो करशे, पण पोतेज तत्वना पारने देखतो न होवाथी, शरणागतने शी रीते पार दर्शावशे? वास्ते उक्त बन्ने विशेषणोए करीने जे युक्त होय तेवा सत्पुरुषने शरण जवाथीज कल्याण प्राप्त करी शकाय छे; अन्यथा नहि.

गुरुरुवाचः—

(दोहा.)

भूलि गयो अज्ञानतें, अपनो आतमरूप ॥
वाहीकों फिर जानवो, ज्ञान कहत कविभूप ॥ ११ ॥

साधन च्यारि कहे गुरुनि, प्रथम एक वैराग ॥
पुनि विवेक शमदम अवर, सुनि मुमुक्षु बडभाग ॥ १२ ॥

प्रथमना दोहरामां शिष्ये "ज्ञान एटले शुं?" एवी जिज्ञासा करेल छे, ते जणाववामाटे गुरु कहे छेः—

अनादि अविद्याना प्रभाववडे करीने पोतानुं जे सच्चिदानंदरूपी स्वरूप छे जे भूलि गएल छे, ते फरीथी जाणवुं तेने तत्त्ववेत्ता पुरुषो ज्ञान कहे छे. आ ज्ञान परोक्ष—अप्रत्यक्ष, अने अपरोक्ष—प्रत्यक्ष एवा बे भेदवाळुं छे; जेमके "दशमो छे" अने "दशमो हुं छुं" एवां बे वाक्यो छे, तेमां जे प्रथम वाक्य छे ते श्रोताने पोतानां स्वरूपनो बोध करनार पदथी रहित छे, अने बिजुं वाक्य श्रोताने स्वरूपनो बोध करनार 'तुं' पद घटित छे. 'दशमो छे' एम कहेवाथी श्रोताने जे ज्ञान थाय छे ते ज्ञान परोक्ष छे एटले के प्रत्यक्ष ज्ञान नथी थतुं, माटे ते वाक्य अयोग्य छे; केवी रीते के, वाक्यजन्य ज्ञाननो विषय दशम पुरुष छे ने ते बन्ने प्रसंगमां अति सन्निहित छे. जे स्वरूपथी भिन्न होय अने संबंधी होय ते सन्निहित कहेवाय छे. दशम पुरुष श्रोताना स्वरूपथी भिन्न नथी, ते तो श्रोता स्वरूपज छे, तेथी अतिसन्निहित छे तथा प्रत्यक्ष योग्य पण छे. जो प्रत्यक्ष योग्य न होय तो बिजा (दशमो तूं छे) वाक्यथी प्रत्यक्ष ज्ञान थाय छे ते न थवुं जोईए. परंतु बीजां वाक्यथी तो प्रत्यक्ष ज्ञान थाय छे. माटे 'दशम' ए प्रत्यक्ष योग्य विषय छे, एम सिद्ध

थयुं. आ रीते अति सन्निहित, वाक्यजन्य, तथा प्रत्यक्ष योग्य एवा दशमनुं जे वाक्यवडे करीने प्रत्यक्ष ज्ञान थाय नहि, ते वाक्य अयोग्य कहेवाय छे. बीजां वाक्योवडे दशमनुं अपरोक्ष ज्ञान थाय छे, माटे ते योग्य वाक्य छे. 'दशमो तुं छे' ए वाक्यवडे करीने जे ज्ञान थाय छे, तज्जन्य ज्ञानथीज 'दशमो हुं छुं' एवुं प्रत्यक्ष ज्ञान थाय छे. माटे ते वाक्यने अपरोक्षता छे. तेवीज रीते सिद्धांतमां ब्रह्मनो बोध करनारां वाक्यो पण बे प्रकारनां छे. जेमके,—**सत्यं ज्ञान मनन्तं ब्रह्म**. एवां वाक्यो अवांतर वाक्यो कहेवाय छे. एवां अवांतर वाक्योमां 'दशमो छे' ए वाक्योनी पेठे श्रोतानां स्वरूपनो बोध करनार पद नथी; एटले प्रत्यक्ष ज्ञान उत्पादन करवामां ते अयोग्य छे. अने **तत्वमसि** एवां वाक्यो तो महा वाक्य छे. एटले तेमांतो 'दशमो तुं छे' ए वाक्योनी पेठे श्रोताना स्वरूपनो बोध करनार 'त्वं' आदि पदो छे, तेथी ते महावाक्यो प्रत्यक्ष ज्ञान उत्पादन करवामां योग्य छे. **सत्यं ज्ञान मनंतं ब्रह्म.** इत्यादि वाक्योवडे जे ज्ञान थाय छे, ते परोक्ष ज्ञान कहेवाय छे अने तत्वमसि इत्यादि वाक्यो पडे जे ज्ञान थाय छे, ते अपरोक्ष ज्ञान कहेवाय छे.

ज्ञान थवामां प्रथम अधिकार संपादन करवो पडे छे. ए अधिकारनां साधन ४ छे; जे गुरु कहे छे के:—१ वैराग, २ विवेक, ३ शमादिषट्संपत्तिः—४ मुमुक्षता.

हवे तेने पृथक् पृथक् रीते लक्षण सहित कहे छे.

वैरागलक्षण.

(दोहा.)

ब्रह्मा इंद्रादिक सबै, करत देह धरि भोग ॥
काक ।व :सम सोगिने, वीतराग जो लोग ॥ १३ ॥

ब्रह्मा तथा ईंद्रादिक देवताओ पोतपोताना लोकमां विशेष पुण्यथी प्राप्त थएला विविध प्रकारना मनवांच्छित अने अकेकथी शत शत गणा वधारे भोगो भोगवे छे. ते सघळा भोगोने कागडानी विष्टा समान तुच्छ गणीने तेनी स्पृहाथी रहित रहेवुं, ते वैराग्य छे. आ वैराग्य बे प्रकारनो छे:-पर अने अपर. तेमां अपर वैराग्य चार प्रकारनो छे. यतमान, व्यतिरेक, एकेंद्रिय अने वशीकार. तेमां ईंद्रियोनी विषयोमां प्रवृत्ति करावनारा जे काम क्रोधादिक चित्तमळ, तेओनो नाश करवामाटे जे प्रयत्न ते यतमान. चितना थोडाक मळो दग्य थए जे नष्ट थएला छे ते अने बीजा बाकी रहेला तेमां भेदनो जे निश्चय करवो, ते व्यतिरेक. ईंद्रियोना बाह्य विषयो जे रूपादिक, तेमांथी रागादिकनो क्षय थवाथी जे ईंद्रियोनी बाह्य विषयोमां प्रवृत्ति करवा अशक्त थवाथी मात्र एक मनमांज मानापमानादि विषयक रागद्वेषादिकनो क्षय ते एकेंद्रिय. अने स्त्री, पशु, पुत्र, धन, धान्यादि दृष्ट विषयो अने आनुश्रविक एटले वेदमां निरुपित जे दिव्य स्वर्गादिक विषयो, तेनाविषे वारंवार दोषदर्शन करीने तृष्णाशून्य थएल साधुनी जे उपेक्षा बुद्धि ते वशीकार. पु-

रुषना ज्ञान तथा प्रकृतिना गुणोनेविषे जे तृष्णारहितपणुं ते पर वैराग्य. पर वैराग्यथी साधक पोताने कृतकृत्य मानी सर्व वस्तुओनी उपेक्षा करे छे. "वैराग्यात् प्रकृतिलयः" वैराग्यथी प्रकृतिनो पण पोतानां कार्यो समेत लय थाय छे.

विवेकलक्षण.

(दोहा.)

देह प्रपंच अनित्य है, आतम नित्य बखान ॥
सारासार हि जानिवो, यहु विवेक सब मान ॥ १४ ॥

नित्य अने अनित्य पदार्थोसंबंधी जे विचार तेने विवेक कहेछे. देहादिक प्रपंच मात्र अनित्य छेः एटले के क्षणपरिणामी—क्षणक्षण वडे करीने नाश पामवाना स्वभाववाळा छे. देहमां तथा अन्य सघळा पदार्थोमां क्षण क्षण प्रति जे फेरफार थयाज करेछे, ए अवस्थांतर एटलुं तो सूक्ष्म छे के, विशेष काळ व्यतीत थयाविना ध्यानमां आवतुं नथी. पदार्थो क्षणपरिणामी छे, ए वात सर्वानुभवसिद्ध छे; अने आत्मा तो नित्य होई परिणाम पामवाना विकारथी रहित छे. एटले नित्यवस्तु—आत्मा एज विश्वमां सार छे. अने देहादि प्रपंच ए अनित्य होवाथी असार छे, तेथी ते त्याज्य छे. स्थिर प्रज्ञा राखी, उपर प्रमाणे युक्तिओ पूर्वक जे विचार करवो, तेवां ज्ञानने विवेक कहे छे.

शमादिलक्षण.

(सवैया.)

वासना त्याग सदा शम है, दम बाहिज वृत्तिन निग्रह ठानें ॥
देखहि दोष विषै उपराम, सहे घन घाम दुखे सुख मानें ॥
शासन वेद गुरुजनको हि प्रमान हृदें शरधाहि बखानै ॥
सब व्याकुलता तजदेमनसें इह भांति शमादिक साधन जानें॥१५॥

१. अंतर इंद्रियोने विषयोथी रोकवी; एटले के तेमां रहेली वासनानो त्याग करवो ते शम छे. आ वासनाओ बे प्रकारनी छेः शुद्धा अने मलिना. तेमां मलिना त्रण प्रकारनी छेः देहवासना, लोकवासना तथा शास्त्रवासना. मलिनावासना पुनर्जन्म करनारी होवाथी त्याज्य छे, परंतु शुद्धा तो आत्मज्ञान करनारी होवाथी ग्राह्य छे.

२. श्रोतादिक बाहिर इंद्रियोने तेमना विषयोमांथी रोकवी, ते दम छेः एटले के अंतःकरणमांथी उडती वासनाजन्य वृत्तिओने रोकवी.

३. सघळा विषयोनेविषे दोष दृष्टि करीने तेमनो त्याग करे. विषयोनो त्याग बे प्रकारथी थायछेः एक छर्दिवत् अने बीजो विषवत्. छर्दिवत् एटले वमननी पेठे. जेमके आज अमुक पदार्थ खावाथी उलटी थई अने तेथी तेना उपर अरुचि उपजीः एटलेसुधी के ते पदार्थनुं नाम मात्र लेतांज ओकारी आवेछे. परंतु समयने पामीने ते अरुचिनो नाश थई गयाथी पुनः ते पदार्थ रुचिकर थतो अनुभवाय छे. अने बीजो जे विषवत् त्याग छे, तेमां तो कोईपण

काळे इच्छा ज थती नथी. जेमके कोई मनुष्य रसोई करी जरा बहार गयो ने फरी आवीने जोय छे तो रसोईना पदार्थोनां पात्रोमांथी सर्प नीकळतो दृष्टिये पड्यो. त्रण दिवसनो भूख्यो हशे तोपण निश्चय थाय छे के 'जो आ अन्ननो उपभोग करीश, तो अवश्य प्राणत्याग थशे.' ने फरीथी त्रणे काळमां ते पदार्थपर ते मनुष्यनी रुचि थनार ज नथी. ते प्रमाणे विषयोने विषवत् समजी, तेनो त्याग करवो. कह्युं छे के,—

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत्त्यज ॥

(अष्टावक्र.)

एवी रीते त्याग करी, भोगयोग्य पदार्थोथी ज्ञानीने जे पामे ते उपरति.

४. टाढ-तडको, क्षुधा-तृषा, सुख-दुःख,—ए आदिक द्वंद्वोने सहन करवानो जे स्वभाव, तेने तितिक्षा कहे छे.

५. वेद अने गुरुनां वचनो सत्य छे. अने तेओ जे कहे छे, ते वात पण सत्य छे. एवो जे दृढतापूर्वक पूर्ण विश्वास ते श्रद्धा.

६. अने मनना विक्षेपोनो नाश ते समाधान जाणवुं. अर्थात् मन तथा ईंद्रियो व्याकूळ थई अधीरताने धारण न करे ते.

मुमुक्षुलक्षण.

(दोहा.)

जन्म मृत्य संसार तें, कैसें छुटिहौं मित्त ॥
सो मुमुक्षु कहियें सदा, यही बिचारे चित्त ॥ १६ ॥

"जन्म–मरणरूपी रेंटमाळ जेमां लागी छे, एवा आ संसाररूपी कूपमांथी क्यारे छूटीशुं?" एवी जेने तिव्र जिज्ञासा छे, ते मुमुक्षु कहेवाय छे. "संसारबंधननी निवृत्ति थईने ब्रह्मनी प्राप्तिरूपी मोक्ष क्यारे थशे?" एवी उत्कट इच्छा तेने मुमुक्षुता कहे छे. एवी मुमुक्षुता जेनेविषे होय ते मुमुक्षु जाणवो. मुमुक्षुनी ते इच्छा, बुभुक्षुपणाज भूख्या मनुष्यनी इच्छा जेवी भोजनमां रहे छे, एवी मोक्षप्राप्तिने माटे रहेवी जोईए. एटले के क्षुधातुर मनुष्यने जेवी रीते शय्या, वस्त्र, भूषण, नाच, रंग, तमाशा, रामा, इत्यादिक कांई रुचतुं नथी, तेवी रीते मुमुक्षुने पण सघळा पदार्थो उपर अरुचि उत्पन्न थई जाय.

(दोहा.)

चारों साधन जो कहे, तिनेंयुक्त जब होइ ॥
तब जा पूछे आतमा, कहे गुरू पुनि सोइ ॥ १७ ॥

शिष्य ज्यारे चारो साधनवडे युक्त थई, अधिकार संपादन करीने पछी गुरुने आत्मासंबंधी प्रश्नो पूछे अने गुरु तेने योग्य अधिकारी जोईने ते तत्वनो उपदेश करे. तत्वने जाणवानी ईच्छावाळा अधिकारी शिष्ये गुरु समीप केवी रीते जवुं ते बतावे छे.

(दोहा.)

नमस्कार अष्टांग करि, भेट हस्तमैं लाय ॥
कहो गुरूज्युं आतमा, कैसें समुझ्यो जाय ॥ १८ ॥

शिष्य मुमुक्षु विचारिके, बोले गुरू दयाल ॥
वही कहतहौं जो कह्यो, अर्जुनसौं गोपाल ॥ १९ ॥
सामवेदके वचन है, तत्वमसी पद तीन ॥
जान्यो इमको अर्थ जिन, लियो रूप तिन चीन ॥ २० ॥

हाथमां यथा मिलित उपहार–भेट लई, सविनय गुरु समीपे जाय अने प्रश्नो करे केः–हे गुरो! आ आत्मा शी वस्तु छे? ब्रह्म शुं छे? जगत् शुं छे? हुं कोण छुं? तथा ए सर्वनो बोध शी रीते थाय? त्यारपछी सद्गुरु अधिकार जोई, विचारपूर्वक सदय हृदय थईने कहे छेः हे शिष्य! श्रीकृष्ण भगवाने अर्जुनप्रत्ये जे तत्वनो उपदेश करेल छे, ते ज तत्वनो उपदेश हुं ताराप्रत्ये करुं छुं, ते तुं स्थिरचित्त थईने सांभळ. तत् त्वं अने असि एवां त्रण पद छे जेनेविषे, एवुं सामवेदनुं वचन छे तें महावाक्य कहेवाय छे. जे पुरुषे ए त्रणे पदना अर्थ जाण्या छे, तेणे ज स्वस्वरूपने ओळख्युं छे.

(चौबोला–चोपाया–साखी मराठी चाल.)

तत्पद ईश जीव त्वंपद है, असिपद ब्रह्म कहावे ॥
माया तें यह तीन भेद है, एकहि बेद बतावे ॥ २१ ॥

शिष्यवचनः—

कहो गुरू ज्यौं एक ब्रह्मके, तीन भेद क्यौं भाखे ॥
कैसें भये कौनके लीने, कौन रूप अभिलाखे ॥ २२ ॥

एमां जे तत्पद छे ते ईश्वर कहेवाय छे, त्वं पद छे ते जीव

कहेवाय छे, अने असिपद छे ते ब्रह्म कहेवाय छे. आ सघळा भेदो मायावडे थएला छे, परंतु वास्तविकताथी तो तेओ एक ज छे, एम श्री वेदांतसिद्धांत दर्शावे छे. ए सांमळी शिष्य पूछे छे केः—हे गुरो! एक ज ब्रह्ममांथी ए त्रण भेद शी रीते थया? शाने लईने थया? अने तेमनां वास्तविक स्वरूप शुं छे? एनुं कृपा करीने भिन्न भिन्न व्याख्यान विस्तारपूर्वक कहो.

गुरुवचनः—

एक ब्रह्म अखंडित चेतन, तातैं उपजी ईक्षा ॥
ताहीकों माया कहियत है, नीकी सुनियैं शिक्षा ॥ २३ ॥
माया जड चैतन्यब्रह्मको, तामैं भयो अभास ॥
सत रज तम तिनगुनों बनाये, तिनतैं द्वैत विलास ॥ २४ ॥
माया अरु प्रतिबिंब ब्रह्मको, गुनन सहित द्वय कीने ॥
एकमांहि सतगुन अधिकानो, दूजो रज तम लीने ॥ २५ ॥
सतगुन अधिक ब्रह्मयुत माया, प्रकट ईशपद पावै ॥
तमगुन अधिक ब्रह्मयुत माया, प्रकटहि जीव कहावै ॥२६॥

मात्र शिष्यने बोध थवामाटे ते ब्रह्मथी सृष्टिनी उत्पत्ति केम थई ते दर्शावे छे.

अद्वितीय अखंड ब्रह्म चैतन्यनेविषे प्रथम एक प्रकारनी ईच्छा उत्पन्न थई. ए ईच्छाशक्ति तेज माया. हवे ए मायासंबंधी विगतने सांमळः—जड एवी ए मायानेविषे चैतन्य स्वरूप एवां ब्रह्मनो आभास पड्यो. ए चैतन्य प्रतिबिंबवाळी माया ते त्रण गुणोनी सा-

म्यावस्था प्रकृति. ए प्रकृतिना सत्व गुणनी शुद्धि तथा अशुद्धि वडे करीने माया तथा अविद्या एवा बे भेद मानेला छे. प्रकृतिए सत्व, रज अने तमो गुणने पोतानी विचित्रताथी उपजाव्या अने ए त्रण गुणोनां न्यूनाधिकपणांथी द्वैत जगतनो विलास उत्पन्न थयो. प्रकृतिना बे भेद मानवामां हेतु एवो छे के एकमां पडेलां ब्रह्मनां प्रतिबिंबने ईश्वरत्व छे अने बीजामां पडेलां ब्रह्मनां प्रतिबिंबने जीवित्व छे. एटले के जे भागमां–शुद्ध सत्वप्रधान प्रकृतिमां पडेल चिदात्मानुं प्रतिबिंब, तेने ईश्वरतत्व छे, अने मलिन सत्वप्रधान प्रकृतिमां पडेल चिदात्मानुं प्रतिबिंब, तेने जीवत्व छे. तेमां मायाबिंबमां पडेल चिदात्मानुं प्रतिबिंब ईश्वर, ते उलटीने ते मायाने पोताने वश करे छे. अर्थात् ते माया, ईश्वरना प्रभावनुं अनुकरण करे छे. अने अविद्याबिंबमां पडेल चिदात्मानुं प्रतिबिंब–जीव, ते अविद्याने वश थईने तेनां विचित्रपणांवडे करीने अनेक प्रकारनो थाय छे. ईश्वर सर्वज्ञ होई, पोतानी उपाधि मायाने वश करे छे अने जीव अल्पज्ञ होई, पोतानी उपाधि अविद्याने वश थाय छे. मात्र जीव–ईश्वरमां आटलो भेद छे. बाकी ब्रह्म चैतन्याभास तो बन्ने छे.

(दोहा.)

बिंबैं भूल्यो आपकों, तमगुनके अधिकार ॥
माया करी विचित्रता, कीने जीव अपार ॥ २७ ॥
सो पीछें कहिऔं सबैं, जीवनके सब मर्म ॥
अबी कहत हौं ईशके, रूप शील गुण धर्म ॥ २८ ॥

आ अवस्थावाळी जे प्रकृति, तेना शुद्धसत्व तथा मलिनसत्व विभागथी समष्टि तथा व्यष्टिना कारणभूत जीव तथा ईश्वर थया. जीवनी उपाधि अविद्या, ते कारण शरीर छे; अने ते शरीरनो अभिमानी ए जीव, ते वेळा प्राज्ञ एवी संज्ञाने प्राप्त थाय छे. ए जीवसंबंधी विषयनी चर्चा आपणे पाछळथी चलावीशुं. हालमां हे पुत्र! ईश्वरना गुण, शील तथा धर्मोनुं विवेचन करुंछुं ते सांभळ.

तत्पदवर्णन.

(सवैया.)

शुद्ध सतो गुनके गुनतैं, प्रतिबिंबनसें निज भूलन पायो ॥
माया जिन खैंचि करी अपने वश, ईश वही सर्वज्ञ कहायो ॥
वह चौदह लोक रचै छिनमैं, अरु मेटतहे जब चाहि मिटायो ॥
शक्ति अनंत कहे सुखदेव, तही पुरुषोत्तम वेद सुगायो ॥२९॥

हवे तत्पद जे के ईश्वरत्वने पामेल छे, तेनुं वर्णन करे छेः—

आभास चैतन्यने शुद्ध सत्वगुणना गुणवडे करीने तेमां जे प्रतिबिंब पडे छे, तेथी पोतानां स्वरूपनुं विस्मरण थयुं. अने जेणे मायाने बलात्कारपूर्वक पोताने वश करी, ते ईश्वरभाव तथा सर्वज्ञभावने पाम्युं; तथा क्षणभरमां ते पोतानी प्रबळ शक्तिथी ज्यारे ईच्छे, त्यारे चौद लोकने उपजावे छे ने मटाडे छे. एवी अनंत शक्ति जेना विषे छे, ते ज पुरुषोत्तमपणाने पामे छे. क्लेश, कर्म, विपाक अने आशयनो जेने त्रणे काळमां स्पर्श मात्र पण नथी, ते पुरुष विशेष ईश्वर कहेवाय छे.

आपहिसें चतुरानन हो, सब स्थावर जंगम जीव उपावै ॥
पालत है हरि हो सबकौं, अरु जीवन जाहि तहां पहुंचावै ॥
होइ रुद्र अनंत संहार करे, सब कालन काल अकाल नसावै॥
त्यौं जगदीश रच्यो जगखेल ज्यौं, बालक खेलिके खेल मिटावै३०

(दोहा.)

तीन देह है ईशकी, कारण सूक्षम स्थूल ॥
ताको अब वर्णन करुं, पुरुष विराट समूल ॥३१॥

ए ईश्वर पोते ज चतुरानन ब्रह्मरूपे थईने स्थावर जंगम जीवोने उत्पन्न करे छे अने पोते ज विष्णु भगवानरूपे थईने जीवोनी जीविकाने, जीव ज्यां रहे त्यां पहोंचाडे छे. अथवा ज्यां जीविका होय त्यां जीवोने पहोंचाडी सघळा जीवोनी परिपालना करे छे, तथा पोते ज रुद्ररूपें थई–सर्वना काळना पण काळरूपे थई अनंत ब्रह्मांडोनो संहार करे छे. जेवी रीते बाळको घरगोलकादिक खेल रचे छे अने पोतानी ईच्छामां आवे त्यारे मटाडी दे छे, तेवी रीते आ जगदीश पण जगतरूपी खेल रचे छे अने मटाडे छे. ए ईश्वरनां कारण, सूक्ष्म तथा स्थूल, एवां त्रण शरीरो छे, तेमांथी सर्वनुं कारण जे विराट्, तेनुं वर्णन सांभळः—

(चोपाई.)

प्रथम देह कारण है माया ॥ ताके बल सब जग उपजाया ॥
जाकी आदि न कोऊ लहीहै ॥ सत्य असत्य न वेद कहीहै ॥३२॥

ईश्वरनुं प्रथम शरीर एटले के कारणशरीर, ए माया ज छे. अने तेनावडे करीने ज तेमणे आ चराचर जगतूने उत्पन्न कर्युं छे. ईश्वर

अनादि छे; ते सत्य छे के असत्य छे, तेना भेदनुं वेदमां पण प्रतिपादन करेल नथी. ए भेद न करी शक्या तेनो हेतु एवो छे के ईश्वरत्व तथा जीवत्व ए भेदो मात्र प्रकृतिना भेदवडे करीने पडे छे. वास्तविक तो ते बन्ने निरूपाधिक ब्रह्म चैतन्य छे. उपाधिथी जणातो जे भाव ते सत्य छे के असत्य छे, एम निर्भर थई कही शकातुं नथी.

(दोहा.)

पंच तत्व तातें भये, पहिले सूक्षम रूप ॥
शब्द स्पर्श अरु रूप रस, गंध कहत कविभूप ॥ ३३ ॥

(छंद चोपाया.)

तिनका सूक्ष्म शरीर भयासो, हिरनगर्भ कहलावै ॥
सब जीवनके आपुन हीतें, लिंग शरीर बनावै ॥ ३४ ॥

ईश्वरना ए कारणशरीर मायामांथी प्रथम सूक्ष्मरूपे पांच तत्वो उत्पन्न थयां: जेवां के—शब्द, स्पर्श, रूप, रस अने गंध. एने पांच तन्मात्राओ पण कहे छे. ए सूक्ष्म शरीरनो जे अभिमानी ते हिरण्यगर्भ कहेवाय छे. ईश्वरनी आज्ञाथी जीवोना भोगमाटे तमः प्रधान प्रकृतिथी उत्पन्न थएली ए पांच तन्मात्राओ, त्रण गुणनी साम्यावस्थावाळी अवस्थामांथी उत्पन्न थएली होवाथी, अपंचीकृत तथा सूक्ष्म छे. त्यारपछी ते सूक्ष्मरूपे रहेली तन्मात्रामांथी सूक्ष्म तत्वो उपजे छे. शब्दतन्मात्रामांथी आकाश, स्पर्शतन्मात्रामांथी वायु, रूपतन्मात्रामांथी तेज, रसतन्मात्रामांथी जल, अने गंधतन्मात्रामांथी भूमि. ए सूक्ष्मरूपे परिणामने पामेलां पांच महाभूतोना सत्वांशवडे अनुक्रमे आकाशथी

कान, वायुथी चामडी, तेजथी नेत्र, जळथी जीभ, अने भूमिथी नासिका, ए ज्ञानेंद्रियो उत्पन्न थाय छे. आ ज्ञानेंद्रियो आकारत्वने पामेल एवां दृष्ट आंख–कानरूपे नहि, पण सूक्ष्म शक्तिओरूपे उपजे छे. ए शक्तिओ जे स्थळे एकत्र थाय छे, ते स्थानने अंतःकरण कहे छे. अंतःकरण बे प्रकारनुं छेः मनरूपे अने बुद्धिरूपे. ए बे भेद वृत्तिना भेदवडे पडेला छे. जे संकल्पात्मक ते मन अने निश्चयात्मक ते बुद्धि. त्यारपछी ए ज पांच महाभूतोना सूक्ष्म रजोंशथी सूक्ष्म कर्मेंद्रियो, जेवी के–वाणी, पाणि (हाथ), पग, गुदा, तथा लिंग; ए उत्पन्न थाय छे. प्रथम जे सूक्ष्म ज्ञानेंद्रियो ते ज्ञानशक्ति कहेवाय छे; अने बीजी जे सूक्ष्म कर्मेंद्रियो ते क्रियाशक्ति कहेवाय छे. ए क्रियाशक्तिओनुं मूळ प्राण छे. ए प्राण पांचे भूतोना रजोंशना एकठा थवाथी थाय छे. ए प्राण एक छे, परंतु उपाधि–क्रियाओना भेदने लईने प्राण, अपान, समान, उदान तथा व्यान, एवी संज्ञाने पामे छे.

ए रीते सूक्ष्मरूपे उत्पन्न थएलां पांच ज्ञानेंद्रिय, पांच कर्मेंद्रिय, पांच प्राण तथा मन, बुद्धि ए सत्तर तत्वोवडे सूक्ष्मशरीर थाय छे. तेमां प्राज्ञ तैजस संज्ञाने तथा ईश्वर हिरण्यगर्भ संज्ञाने पामे छे. तेमां प्राज्ञ जे के व्यष्टिरूपे छे, तेनां सूक्ष्म शरीरोनो अभिमानी तैजस पण व्यष्टिरूपे समजवो; अने ईश्वर जे के समष्टिरूपे छे, तेना सूक्ष्मशरीरनो अभिमानी हिरण्यगर्भ पण समष्टिरूपे समजवो.

(दोहा.)

इंद्रि बुद्धि मन प्राण ये, सबको रचे विचार ॥
सूत्रातमा कहते सबैं, यहु निश्चय उर धार ॥३५॥

स्थूल तत्व पांचों प्रकट, तिनतें या ब्रह्मंड ॥
नभ अरु पवन सुतेज जल, अरु पृथ्वी वहु खंड ॥३६॥
स्थूल देह है ईशकी, स्थूल तत्वकी जान ॥
ताहीमें सब जीवकी, देह लीन जिय मान ॥ ३७ ॥

दश इंद्रियो, पांच प्राण, मन अने बुद्धि, ए सत्तर तत्वोनी क्रियाशक्तिनां प्राधान्यत्वनो हिरण्यगर्भ ज्यारे स्वीकार करे छे, त्यारे तेने सूत्रात्मा कहे छे.

ईश्वर, प्राज्ञनां कर्मफळोना भोग तथा भोगववामाटे भोगनां स्थानोने उत्पन्न करे छे. ते स्थानोनी उत्पत्तिनेमाटे अपंचीकृत पांच महाभूतोनुं पंचीकरण करीने तेमांथी स्थूळ पांच भूतोने उपजावी, ब्रह्मांडोने उपजावे छे. स्थूळत्वने पामेलां ए पांच महाभूतोथी ईश्वर तथा जीव–प्राज्ञ स्थूळ देहभावने पामे छे. ए स्थूळदेहमां हिरण्यगर्भ तथा तैजस क्रमथी विराट् तथा विश्वसंज्ञाने पामे छे.

(कवित्त.)

शिर हि अकाश श्वास, नासिका मै पौंनबास ॥
सूर शशि नैन मुख, अनल बास करे है ॥
हरि हर है भुजा दोउ, हियो चतुरानन होत ॥
उदर सकलहि लोक, बानी बेद रहे है ॥
पर्वत है अस्थि रोम, सकल वनस्पति ज्यौ ॥
मेघमाला वीर्य औ, पताल पाय तरे है ॥
अलख अनूप जाको, महिमा अनूप देखो ॥
वही विश्वरूप अरु, वही विश्व धरे है ॥३८॥

विराट्नां स्थूळ शरीरनुं वर्णन करेछे.

आ विराट्नुं आकाश ए शिर छे, पवन ए नासिकाना श्वास प्रश्वास छे, सूर्य-चंद्र ए बे नेत्र छे, अग्नि ए मुख छे, हरि-हर ए बे हाथ छे, ब्रह्मा ए हृदय छे, चौदलोकरूपी उदर छे, वेद ए वाणी छे, पर्वत ए तेनां हाड छे, नदीओ ए नाडी छे, वनस्पतीओ रोम छे, मेघमाळा ए वीर्य छे, अने पाताळ ए जेनां पगो छे एवो, लक्षमां न आवे एवो, कोईनी उपमा आपी न शकाय एवो अनुपम, तथा अथाग महिमावंत एवो ए विराट् पोते ज विश्वरूप तथा सकळ विश्वने धारण करनार छे.

शिष्य०—

(दोहा.)

समुझ्यो पुरुष विराट जो, कीनो आप बखानि ॥
कबतै है कबलौं रहै, कहियै सब परमानि ॥ ३९ ॥

गुरु०—

ब्रह्माजी की आयु तैं, याको बंध्यो प्रमान ॥
सुन अब तौ सौं कहत हौं, ताको सकल विधान ॥ ४० ॥

शिष्य कहे छे,--हे गुरो! ए जे विराट्स्वरूपनुं आपे वर्णन कर्युं, ते सघळुं हुं समज्यो; पण विराट्पुरुष क्यारथी उत्पन्न थयो छे, ने क्यां सुधी रहे छे, तेना काळनुं प्रमाण कृपा करीने कहो.

गुरु०—ब्रह्माजीनां आयुष्यनी साथे ए विराट्पुरुषना आयुष्यनुं प्रमाण छे; माटे ए ब्रह्मदेवनां आयुष्यनां प्रमाणने सविस्तर सांभळ, एटले विराट्पुरुषनां आयुष्यनुं पण तने सहज ज्ञान थशे.

ब्रह्मानां आयुष्यनुं वर्णन करे छे:—

(सवैया.)

सत्तर लाख हजार अठाइस, है युगसत्य चहुं पद जानौं ॥
बारह लाख हजार छयानवें, त्रेतातांह पद तीन बखानौं ॥
आठहि लाख हजारसु चौसठ, द्वापर द्वेपद धर्महि मानौं ॥
चारहु लाख हजार बतीस, कहै कलि एक पदे ठहरानौं ॥४१॥

मनुष्योनां १७,२८,००० वर्षोनो एक सत्ययुग; १२,९६,००० वर्षोनो एक त्रेतायुग; ८,६४,००० वर्षोनो एक द्वापर अने ४,३२,००० वर्षोनो एक कलियुग. सत्ययुगमां धर्म चारे पाँ-*

* धर्मनी आवी गति थवामां पुराणांतरमां आख्यान छे के,–एक वेळा पिप्पलाद मुनि नामना कोई एक ऋषिए अरण्यमां केटलोक नवयौवना बालाओने जलक्रीडा करती जोई अने तेथी तेमने कामवृत्ति उत्पन्न थई. आथी तेमणे बालाओनां मंडळपासे जई, तेओमां प्रमुख जणाती बालानी हकीकत पूछी. पूछतां जणायुं के ए पद्मसेन राजानी पुत्री पद्मकुमारी छे अने अद्यापि अविवाहिता छे. आ सांभळी ऋषिनुं मन विशेष चलायमान थयुं अने समय साधी राजा पद्मसेननी राजसभामां गमन कर्युं. राजाए पाद्यार्घवडे पूजा करी आज्ञा करवा विज्ञप्ति करी. आथी लाग जोई राजाने वचनमां बंधायेलो समजी, तेनी कुंवरी पद्माथी पोतानां लग्न करी देवानी आज्ञा करी. पोते वृद्ध छतां पण पद्माथी लग्न करी, तेने पोताना आश्रम प्रत्ये लई गयो. पद्मा त्यां राजवैभवनो त्याग करी, ऋषिपत्निना धर्मोनुं अवलंबन करी उग्र पतिव्रत पाळवा लागी. केटलोक काळ व्यतीत थया पछी, पिप्पलाद मुनि महा मांदगी भोगववा लाग्यो. पोतानो देहावसान समय पासे आवेलो जोई, गंगाजी, के जे तेमना आश्रमथी थोडे ज दूर हतां, त्यांथी गंगाजळ लई आववानुं पद्माने अर्धरात्री समये कह्युं. अने साथे सूचना करी के, सूर्योदय थतां पहेलां गंगाजळ लावजे; केम के सूर्योदय थतां मारो दे-

दथी विचरे छे, त्रेतामां त्रण पादथी, द्वापरमां बे पादथी अने कलियुगमां एक पादथी विचरे छे.

(दोहा.)

तैंयालिस लछ वरख अरु, बीते बीसहजार ॥
एक चौकडी जुगनकी, ताको कह्यो बिचार ॥ ४२ ॥
ऐसी ऐसी चौकडी, जुग बीतही हजार ॥
ब्रह्माजीको एक दिन, तब होवत निरधार ॥४३॥

हांत थनार छे. कोमलांगी पद्मा, पहाडोमां तथा अरण्योमां थई गंगाजी पहोंची; अने जळ भरी जेवी पाछी फरी, तेटलामां तेनां सतीत्वनी परीक्षा करवाने राजाना रूपमां धर्म तेना सामे आवी उभो. धर्मे तेने घणी घणी लालचो बतावीने छेवट तेना धणीनुं मरण थवाना मिथ्या समाचार कही, अरण्यमां एकलां न जवाने अने पोतानी साथ राजधानीमां चालवाने विनव्युं. सती पद्माए तेनो घणो तिरस्कार कर्यो, छतां धर्मे तेनाउपर बलात्कार करवानुं रूप बताव्युं. पछी जेवो तेनापर हाथ नाखवा गयो, तेवो ज पद्माए तेने "देवताओ क्षमा करो! क्षमा करो!" इत्यादि शब्दो कही अटकाववा मांड्युं. तेटलामां श्राप आप्यो के—"हे दुष्ट! तारो क्षय थई जजो!!" आथी धर्मे तथा देवताओए घणा कालावाला करवाथी सतीए तेनुं समाधान कर्युं अने कह्युं:—दरेक सत्ययुगना आरंभमां तुं (धर्म) वाछडाने रूपे अवतरशे; अने ते काळमां (सत्ययुगमां) चतुष्पाद रही, सर्वत्र पूजाशे. त्रेतामां एक पगे लंगडो थशे ने महात्म्य घटशे. द्वापरमां बे पग भांगी जशे अने पीठथी तणाशे; पण केटलाक दयालु मनुष्यो तारुं पालन करशे. कलियुगना आरंभमां एक पग रहेशे ने हालचाल थई शकशे नहि. कलिना मध्यभागमां निर्माल्य जेवो रहेशे, अने कोई बारणे बांधशे नहि अने कलिना अंतमां मरण पामशे.

जे ते जुगको दिन कह्यो, ते ते जुगकी रात ॥
सृष्टि रचे दिनके भये, राति प्रलय होइ जात ॥४४॥

ए प्रमाणे ४३,२०,००० वर्षोनी, चार युगनी एक चोकडी थाय छे, एवी एवी चार युगोनी एक हजार चौकडी ज्यारे व्यतीत थाय छे, त्यार ब्रह्माजीनो एक दिवस थाय छे. जेटलो काळ दिवसनो कह्यो, तेटलो ज काळ रात्रिमां जाय छे. ब्रह्मा ज्यारे पोतानी उंघमांथी जागे छे, त्यारे त्रण गुणनी साम्यावस्थावाळी ए प्रकृतिमांथी जेवी प्रथम हती, तेवी ज रचनावाळी आ सृष्टिने वारंवार रचे छे, अने ज्यारे तेनी रात पडे छे, त्यारे सृष्टि पोतानां कारण प्रकृतिमां लयभावने पामे छे.

ब्रह्माहीके दिवसको, कल्प कहत है तात ॥
चौद मनुं ताकेविसे, राजै करत भरिजात ॥ ४५ ॥
वर्ष तीनसे साठको, इन दिवसनको होइ ॥
आयु दिव्य सौ वर्षकी, ब्रह्माजीकी सोइ ॥ ४६ ॥
ब्रह्माजीके जनमतैं, प्रकट होत संसार ॥
महा प्रलय होइ मरनतैं, यह जानौ निरधार ॥ ४७ ॥

एवा ब्रह्माना एक दिवसमां चौद मनुओ राज्य करे छे; (स्वायंभुव, स्वारोचिय, औत्तमी, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रौच्य, अने इंद्रासावर्णि. ए चौद मनुओ कहेवाय छे. एमांना तेरमा मनुने दिवसावर्णि पण कहे छे.) ए दिवसने कल्प कहे छे. एवा ३६० दिवसोनुं एक वर्ष कहे-

वाय छे. एवां १०० वर्षनुं ब्रह्माजीनुं आयुष्य छे. ए ब्रह्माजीनो जन्म थएथी संसार उत्पन्नभावने पामे छे, अने तेमनां मरणथी संसार स्वकारणमां लयभावने पामे छे. ब्रह्माजीनां शयनवेळा जे प्रलय थाय छे, तेने दैनिकप्रलय कहे छे अने मरणवेळा जे प्रलय थाय छे, तेने महाप्रलय कहे छे.

कहौ कहांलौ ईशकी, मायाको विस्तार ॥
याहीसै संक्षेपसों, कुछ कुछ कियो बिचार ॥ ४८ ॥
तत्पद ईश्वरको कह्यो, ज्यों है सब व्यवहार ॥
अब सुन त्वंपद जीवको, जो नसाय संसार ॥ ४९ ॥

ईश्वरनी माया अपार होई अवर्णनीय छे, तेथी संक्षेपे जे कांई कहेवामां आवे छे, तेने स्वबुद्ध्यनुसार विचारी, समजी लेवुं जोइये.

ईश्वरना तत्पदसंबंधी जे कांई कहेवानुं हतुं, ते कह्युं. हवे जीवनुं जे त्वंपद छे, ते श्रद्धापूर्वक सांभळ; के जेथी संसारभावनो नाश थाय.

त्वंपदवर्णन.

(चौबोला–चोपाया.)

पहिले काहि उत्पत्ति ईशकी, वही जीवकी जाने ॥
वाके शुद्ध सत्व गुन याके, तमगुन अधिक बखाने ॥५०॥

प्रथम ईश्वरनी उत्पत्ति कही, तेवी ज रीते जीवनी पण ते साथे संक्षेपमां कही. ए बेमां फेरमात्र एटलो ज के ईश्वर शुद्ध सत्वगुण प्रधाननुं कार्य छे अने जीव ए मलिन सत्वगुणप्रधाननुं कार्य छे. तेना साथे सर्वज्ञता, अल्पज्ञता, मायाने वश राखवापणुं तथा अविद्याने

आधीन थई जवापणुं, ईत्यादि फेरफारो पण क्रमपूर्वक समजवा

शिष्य०—

(दोहा.)

सत रज तम ये तीन गुन, मायाके कहि आय ॥
तिनके लक्षण करि कृपा, कहो न मोहि समुझाय ॥ ५१ ॥

गुरु०—

सकल वस्तुको ज्ञान अरु, विमल बुद्धि जब होइ ॥
उदय सत्वगुन जानिये, कहत शयाने सोइ ॥ ५२ ॥

आटली वेळा गुणशब्दनो उपयोग थतो सांभळी, गुणनां स्वरूप न समजायाथी शिष्य, गुणोना संबंधमां जिज्ञासा करे छेः—

हे गुरु! आपे पूर्वे कह्युं के सत्व, रज अने तम ए त्रण गुणो मायानां नाम छे. परंतु तेनां लक्षण शुं छे; ते कृपा करी कहो, कारण के हजी सुधी मने तेनुं खरूं स्वरूप समजायुं नथी.

शिष्यनी जिज्ञासानुं समाधान गुरु करेछेः—

आ त्रण गुणोमांथी सत्वगुण पोतानी स्वच्छताथी तमोगुणनां आवरणनो नाश करनार तथा सुखनो प्रकट करनार छे. ज्यारे बुद्धि निर्मळ थाय अने सर्व वस्तुनुं ज्ञान थाय, त्यारे सत्वगुणनो उदय समजवो.

विविध विषयके भोगमैं, तृष्णा बढत अपार ॥
अरु उपजे आसंग जब, उदय रजो तब धार ॥ ५३॥
प्रमाद अरु आलस्य वे, दिनदिनपें अधिकाय ॥
अरु निद्रा बाढे अती, तब तम उदय कहाय ॥ ५४॥

(दोहा.)

प्रकाशमय वे रागमय, वे अज्ञान सरूप ॥
बांधत सुखसों कर्मसों, और मोहसों भूप ॥ ५५ ॥

अप्राप्त वस्तुनी प्राप्तिनी अभिलाषा तथा प्राप्त वस्तुनां रक्षणनी अभिलाषानो वधारनार, सर्व कार्योमां प्रवृत्ति करावनार तथा विषयोमां प्रीति करावनार रजोगुण छे. विविध प्रकारना भोगोमां ज्यारे तृष्णा वधे तथा सर्व वस्तुमां आसक्ति वधे, त्यारे रजोगुणनो उदय समजवो.

तमोगुण ए ज्ञानशक्तिनुं आवरण करनार तथा अविवेकरूपताथी जीवोने भ्रांति उपजावनार छे. प्रमाद, आलस्य अने निद्रानो दिनदिन प्रत्ये वधारो थाय, त्यारे तमोगुणनो उदय समजवो.

सत्वगुण प्रकाशरूपे होईने जीवने 'हुं सुखी छुं, हुं ज्ञानी छुं' एवी रीतना सुखना संगवडे बांधे छे. रजोगुणरूपे होईने जीवने 'हुं लौकिक—वैदिक कर्मोने करुं छुं, अने तेनां फळोने भोगवीश' एवा प्रकारना कर्मना संगवडे बांधे छ. अने तमोगुण ए अज्ञानरूपे होईने, जीवने देहादिक मोहना संगवडे करीने बांधे छे. सत्वगुणथी ज्ञान उपजे छे; रजोगुणथी प्रवृत्ति तथा लोभ उपजे छे अने तमोगुणथी मोह तथा प्रमाद उपजे छे. सत्वगुणनी वृद्धिथी उर्ध्वलोकनी प्राप्ति थाय छे; रजोगुणनी वृद्धिथी मनुष्यलोकनी प्राप्ति थाय छे अने तमोगुणनी वृद्धिथी कनिष्ठ एवा नरकादिक लोकनी प्राप्ति थाय छे.

(सवैया.)

सच्चित् आनंदरूप अखंड, सु आप तमोगुनतैं बिसरायो ॥
एकहिसें ज्यौं अनेक बनाय, सुमायिक खेल सदा मन भायो ॥
कारनदेह वही अज्ञान रु, ओहि अविद्या नाम कहायो ॥
सूक्षम स्थूल उपाधिको मूल, वही प्रतिकूल सुखानंद गायो ॥५६॥

(दोहा.)

मायाकी दो शक्ति है, विक्षेप रु आवर्ण ॥
चेतनरूप भूलायके, लायो अंतःकर्ण ॥ ५७ ॥

पोते साक्षात् सच्चिदानंदस्वरूप होवा छतां पण तमो गुणना वधी जवाथी पोतानुं जे अखंड स्वरूप छे, तेने आत्मा भूली गयो. अने एक स्वरूपमांथी पोते ज मायावी—बाजीगरनी पेठे मायिक खेलवडे करीने अनेक रूपो बनाव्यां. अज्ञान, अविद्या, माया, कारण, स्थूल तथा सूक्ष्म देहो,—ए सघळां मात्र उपाधिना भेदवडे करीने अधिष्ठानथी प्रतिकूळ जणाय छे; वास्तविक रीते तो एक आत्मस्वरूपथी अतिरिक्त अन्य पदार्थ ज नथी.

ए माया जे ब्रह्मना एक देशमांथी उपजी छे, तेनी आवरण अने विक्षेप, एवी बे शक्ति छे. ए बे शक्तिओए आत्मा के जे चैतन्य स्वरूप छे, तेने भूलवी, तेनां आत्मस्वरूपने भ्रांतिमां नाखीने, पोते अन्योन्याध्यास वडे तेनी चिन्मयतानुं ग्रहण करीने, पोतानी जडतानो तेनामां आरोप कर्यो. अने ए आरोपथी आत्मा, पोताने-

विषे जडतानो स्वीकार करीने अंतःकरणमां अभिमानवाळो थयो. आ जे माया ते ज कारण-शरीर कहेवाय छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

मूल अविद्याको कही, मुख्य उपाधि देव ॥
देह लिंग अरु स्थूलकी, जान्यो चाहत भेव ॥ ५८ ॥

शिष्य कहे छे,-हे देव! आपें सर्व जगतनी मूळभूत एवी अविद्यानुं कथन कर्युं, तेथी तेनां स्वरूपनो बोध थयो अने कारण-शरीर शुं छे, ते पण जाण्युं. परंतु लिंगदेह तथा स्थूळदेह कोने कहे छे, तेनो भेद जाणवानी चाहना छे माटे ते कृपा करीने कहो.

गुरु०:—

(सवैया.)

नासिका नैन त्वचा रसना मिलि, कान सुइंद्रिय ज्ञान वखान्यौ ॥
वाक रु पाणि जुं पाद उपस्थ, गुदा मिलि पांच सुकर्म विधानौं ॥
प्राण अपान रु व्यान समान, उदान हि और मनौं बुधि सानौं ॥
सुक्ष्मज्युं पंचहि तत्वन तैं यह, सत्तर तत्वकी सूक्ष्महि जानौं ॥५९॥

हवे गुरु सूक्ष्मशरीरनुं वर्णन करे छेः—

कान, चामडी, चक्षु, जीभ अने नासिका,-ए पांच ज्ञानेंद्रियो तथा वाणी, हाथ, पग, गुदा अने उपस्थ, ए पांच कर्मेंद्रियो (ज्ञानेंद्रियो तथा कर्मेंद्रियोने सूक्ष्मरूपे समजवी, गोलकरूपे नहि.) प्राण, अपान, व्यान, समान, अने उदान ए पांच प्राण तथा मन,

बुद्धि ए सघळां मळीने सूक्ष्म एवां सत्तर तत्वो, जे के सूक्ष्म पंच-भूतोथी उत्पन्न थएलां छे, तेने सूक्ष्मशरीर कहे छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

पांच तत्व सुक्षमहितैं, सतरा क्यौं करि कीन ॥
कहिये मोसों प्रकट करि, यामैं को परवीन ॥ ६० ॥

आवी उत्पत्ति सांभळीने शिष्य पुछे छेः—

हे गुरु! तत्वो ज्यारे पांच ज छे, त्यारे तेमांथी १७ केवी रीते थयां ते तथा तेओमां कोण तत्व कोनामां मुख्यरूपे तथा कोण गौणरूपे रहेल छे, ते स्पष्ट करीने कहो.

गुरु०:—

वाक् श्रवण आकाश तैं, प्रकट होत है जान ॥
वह बोलै वहही सुने, दोऊ शब्द निधान ॥ ६१ ॥

गुरु कहे छेः—वाणी तथा कान ए बे इंद्रियो आकाशथी उपजेली छे तथा बेउने शब्दाश्रयत्व छे. एमां पहेली शब्दनो उच्चार करे छे ने बीजी सांभळे छे. एटले के वाणी बोले छे अने कान सांभळे छे.

त्वचा पाणि ये पवनतैं, प्रकट होत मनधार ॥
दोऊ स्पर्श क नहिको, नीको जानत सार ॥ ६२ ॥
नयन चरण ये तेजतैं, उपजत दोऊ कही जु ॥
वे चाहत वा रूपकुं, वे लेइ जात वही जु ॥ ६३ ॥
रसना और उपस्थ दोउ, जलतैं सुन रे तात ॥
जानत रसके स्वादकुं, समुझ देख यह बात ॥ ६४ ॥

चामडी अने हाथ ए बन्ने इंद्रियो, पवनथी उपजेली छे तथा ए बेउने स्पर्शाश्रयत्व छे. ए बेउ सारी रीते स्पर्शने प्रत्यक्ष करी शके छे.

आंख अने पग, ए बन्ने इंद्रियो तेजथी उपजेली छे. नेत्र रूपने बतावे छे अने पग ते स्थळे लई जाय छे.

रसना–जीभ अने लिंग, ए बन्ने इंद्रियो जळथी उपजेली छे, तथा ए बेउने रसाश्रयत्व छे, तेथी ते बेउ रसना स्वादने सारी पेठे समजी शके छे.

(दोहा.)

गुलद्वार अरु नासिका, ये पृथवीतैं दोइ ॥
वहो ठिकानो गंधको, वहां ज्ञान सब होइ ॥ ६५ ॥
प्राण अपान समान अरु, व्यान उदानहि जान ॥
पांच ठिकानेतैं भयो, एकहि पवन बखान ॥ ६६ ॥
पांच भूतके अंशतैं, उपजे मन अरु बुद्धि ॥
सब इंद्रियके स्वादकी, ताहीतैं उन शुद्धि ॥ ६७ ॥
पांच प्राण अरु बुद्धि मन, इंद्रिय दशों गिनाय ॥
पांच तत्वतैं जो भये, सो सब किये बताय ॥ ६८ ॥

(चौबाला–चोपाया.)

कारन जो पहिले कहि आये, अरु या लिंग समेत ॥
कर्म भोग करनेके काजे, स्थूल देह धरि लेत ॥ ६९ ॥

गुदा अने नासिका, ए बन्ने पृथ्वीथी उपजेलां छे. ए बन्ने इंद्रियोने गंधाश्रयत्व छे. गुदा गंधनो त्याग करे छे अने नासिका गंधनुं ग्रहण करे छे.

प्राण, अपान, समान, उदान अने व्यान ए पांच वायुओनां कार्यो जुदां जुदां छे. मुख तथा नासिकावाटे अंदर बहार आवागमन करवुं, ए प्राणनुं काम छे; जळ तथा मळने नीचे लई जवां, ए अपाननुं काम छे; खानपानना पदार्थोना समान भाग करीने जठराग्निमां तेमने लई जवां, ए समाननुं काम छे; रसादिकने योग्य स्थळे पहोंचाडवां, ए उदाननुं काम छे; तथा तमाम नाडीओमां–आखा शरीरमां फेलाई रहेवुं, ए व्याननुं काम छे. परंतु

स एकोप्युपाधि भेदात् प्राणापानादि संज्ञां लभंते ॥

ए पवन एक ज छे, तथापि कार्यरूपी उपाधिना भेद वडे करीने प्राण-अपनादिक नामोने पामेलो छे.

पांचे भूतोना अंशथी मन तथा बुद्धि उपजेलां छे, तेथी तेमने सर्व इंद्रियोना स्वादनी खबर पडे छे. दश इंद्रिय, पांच प्राण, मन तथा बुद्धि, ए १७ तत्वो ५ तत्वोमांथी उत्पन्न थयां, ते तने बताव्यां. एनी पहेलां कहेल जे कारणशरीर तथा आ सूक्ष्म लिंगशरीर सुद्धांत कर्मना भोगने भोगववाना स्थानरूपी स्थूळशरीरनुं धारण जीवात्मा करी ले छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

कारण सूक्षम देहकी, कहि सो समुझ्यो देव ॥
अब कहिये करिके कृपा, स्थूल देहको भेव ॥ ७० ॥

शिष्य कहे छे:—हे देव! आपे जे विगत कारण तथा सूक्ष्म देहना संबंधमां कही, ते तो हुं पूर्ण रीते समज्यो, परंतु तेवी ज रीते हवे कृपा करीने आप स्थूळ देहनो भेद दर्शावो.

गुरु०:—

(चौबोला–चोपाया.)

महाभूत पंचीकृत करिके, संचितकर्म उपावै ॥

सुखदुख फलके भोग करनकुं, स्थूलदेह छबि छावै ॥७१॥

गुरु०:—अपंचीकृत पांच महाभूतनुं पंचीकृत करीने जीवोनां जे संचित कर्म छे, तेनां फळो तेनाथी भोगववा वास्ते परमेश्वर स्थूळ भूतोनी उत्पत्ति करीने भोग भोगववानां स्थानरूप चौद लोक तथा ते ते लोकमां वसवायोग्य शरीरो अने तेमनां जीवननां साधनमाटे अन्नादि पदार्थोने उपजावी, कृतकर्मनां सुखदुःखरूपी फळोने भोगवावे छे. स्थूळ भूतोथी उपजेल ए लोक शरीर तथा भोगयोग्य अन्य सघळा पदार्थो स्थूळरूप समजवा.

शिष्य०:—

(दोहा.)

पंचीकृत समुझ्यो न मैं, जो किय आप बखान ॥

तातैं फिर विस्तारसैं, कहिये प्रकट विधान ॥ ७२ ॥

शिष्यः—हे गुरु ! अपंचीकृत पांच महाभूतोने पंचीकृत करे छे एम जे आपें कह्युं, तेमां पंचीकृत एटले शुं, ते हुं समजी शक्यो नथी, वास्ते तेनुं स्पष्टिकरण करी आप फरीथी कहो.

गुरु०:—

(दोहा.)

कठोर या माहि द्रवत जल, तेज उष्णता आन ॥

चलत पवन खाली जहां, तहां व्योम पहिचान ॥ ७३ ॥

गुरु०—पृथ्वीमां कठोरता, जळमां द्रवता, तेजमां उष्णता, पव-

नमां चापल्यता अने ज्यां खाली भाग, त्यां सघळे आकाश छे एम समजवुं. स्थूळ देहमां पण ते ज प्रमाणे जाणवुं. ए सघळां तत्वो परिणाम पामेलां जणाय छे.

(दोहा.)

एक तत्वतैं पांच कर, पांचनतैं पच्चीश ॥
पांच अंश न्यारे रहे, मिश्रित कीने वीश ॥ ७४ ॥

(छप्पय.)

अस्थि मांस त्वक् रोम, नाडिका प्रकट पांच भुव ॥
रेत, पित्त, अरु स्वेद, लार पुनि रुधिर नीर भुव ॥
भूख प्यास अरु प्रभा, नींद आलस्य तेज गनि ॥
धावन कूदन चलन, सकुरन पसरन पवनसुभनि ॥
शिर कंठ हृदय अरु उदर कटि, यहु आकाश विधि पंच लही॥
इम पंच भूत पंचीकरन, यहि पचीश सुखदेव कहि ॥ ७५ ॥

हे शिष्य! प्रथम ते पांच महाभूतो, जे के अपंचीकृत सूक्ष्मभूत छे, तेमां पहेलां दरेकना बे भाग करीने तमांना एक अर्ध भागना चार भाग करवा; अने ते चारने दरेकना अर्धांश साथे जोडवा. एटले एक एकना पांच पांच अंश थया, अने सघळा मळीने पचीश भाग थया. तेमांथी पांच जे अर्धा भाग रह्या, तेमां दरेक तत्वना जे चार चार भाग द्वितीय अर्धा भागमांथी करेला छे, तेने अरस्परसमां मेळववा; जेथी दरेक तत्वमां अर्धअंश पोतानो खास अने अर्धअंश बीजां दरेक तत्वना भागो--चार तत्वोना अकेक अष्टमांश भाग मिश्रित कर्याथी थयो. एम प्रत्येक तत्वना भागो एक बीजामां जे मळया, ते पंचीकरण थयुं.

पंचीकरणनी स्पष्ट समजणमाटे कोष्टक.

अङ्क.	कयुं स्थूल भूत.	तेमां कयां कयां भूतनो केटलो अंश.				
		आकाश	वायु	तेज	जळ	पृथ्वी.
१	आकाश.	१/२	१/८	१/८	१/८	१/८
२	वायु.	१/८	१/२	१/८	१/८	१/८
३	तेज.	१/८	१/८	१/२	१/८	१/८
४	जळ.	१/८	१/८	१/८	१/२	१/८
५	पृथ्वी.	१/८	१/८	१/८	१/८	१/२

आथी स्पष्ट जणाशे के दरेक स्थूळ महाभूतमां पोतानी जातनां सूक्ष्म स्वरूपनो अर्धो भाग छे अने बाकीनां चार सूक्ष्म भूतोनो एक-अष्टमांश भाग दरेकमां आवेलो छे. देहमां, हाडकां, मांस, चामडी, रोम अने नाडीओ,—ए पांच पृथ्वीना भागथी उपजेलां छे; वीर्य, पित्त, परसेवो, लाळ, अने लोही,—ए जळना भागथी उपजेलां छे; भूख, तरस, कांति, निद्रा अने आळस,—ए तेजना भागथी उपजेलां छे; दोडवुं, कूदवुं, चालवुं, संकोचवुं, अने प्रसारवुं,—ए वायुना भागथी उपजेलां छे; अने शिर, कंठ, हृदय, उदर अने कटि,—ए

आकाशना भागथी उपजेलां छे. एवी रीते पांच भूतनां पच्चीश अंगो, ए पंचीकरण थवाथी उत्पन्न थएलां छे.

(दोहा.)

एक एकके पांच करि, कहेसु सब पच्चीश ॥
कौन तत्वमें को मिले, सुनो चित्त देइ बीश ॥ ७६ ॥

एक एकना पांच पांच भाग कर्याथी बधा २५ भाग थएला छे. तेमां कयां तत्वमां कयुं तत्व मळेलुं छे, ते चित्त दईने सांभळ.

(दोहा.)

एक एकके नौ करे, पांचसों पैंतालीश ॥
पांच राख चालीशके, मिश्रित कीने वीश ॥ ७७ ॥
हाड मुख्य पृथ्वी रही, मांस नीर नस तेज ॥
त्वचा पवन मिलिके भई, रोम अकाश कहेज ॥ ७८ ॥
बीज मुख्य जल जानिए, पित्त तेज मिल होइ ॥
स्वेद पवन भू रुधिरमय, लार गगनयुत जोइ ॥ ७९ ॥

एक एक तत्वना नव नव भाग करवा अने तेथी पांचना ४५ भाग थया. तेमांथी पांच जेमना तेम रहेवा दीधा अने बाकीना जे ४० तेने एक बीजामां मिश्रित कर्या अने ४० ना २० कर्या. [ते गणावे छे.]

दरेक तत्वनां पांच पांच अंगो आगळ गणाव्यां; हवे तेमां पंचीकरण शी रीते रहेल छे, तेनुं स्पष्टीकरण करे छेः—

पृथ्वी, मुख्य भागरूपे हाडकामां रही, पृथ्वीतत्वमां जळनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी मांस थयुं; तेजनो एक अष्टमांश भाग

मळवाथी नाडीओ थई; पवननो एक अष्टमांश भाग मळवाथी चामडी थई अने आकाशनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी रोम थयां.

जळ मुख्यभागरूपे वीर्यमां रह्युं, जळतत्वमां तेजनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी पित्त थयुं, पवननो एक अष्टमांश भाग मळवाथी स्वेद थयो, पृथ्वीनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी रुधिर थयुं अने आकाशनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी लाळ थई.

(दोहा.)

क्षुधा मुख्य तेजें रही, प्यास पवनमें मान ॥
सुखमां जल आलस अवनि, नींद अकाश बखान ॥ ८० ॥
धावन मुख्य समीर है, गगन पसारनि मांहि ॥
कूदन तेज संकोच भुव, चलन नीर किनु नांहि ॥ ८१ ॥
शिर अकाश सो शुद्ध है, कंठ वायु हिय तेज ॥
उदर नीर युत जानिये, कटि भुव गंध गहेज ॥ ८२ ॥

तेज मुख्यभागरूप क्षुधामां रह्युं, तेज तत्वमां पवननो एक अष्टमांश भाग मळवाथी तरस थई, जळनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी सुख उत्पन्न थयुं, पृथ्वीनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी आळस थयुं, अने आकाशनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी निद्रा थई.

पवन मुख्यभागरूपे दोडवामां रह्यो, पवनतत्वमां गगननो एक अष्टमांश भाग मळवाथी प्रसारण थयुं, तेजनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी कूदवुं थयुं, भूमिनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी संकोच थयो अने जळनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी चलन थयुं.

आकाश मुख्यभागरूपे शिरमां रह्युं, आकाशतत्वमां वायुनो

एक अष्टमांश भाग मळवाथी कंठ थयो. तेजनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी हृदय थयुं, जळनो एक अष्टमांश भाग मळवाथी उदर थयुं अने भूमिना एक अष्टमांश भाग मळवाथी कटि उपजी.

(दोहा.)

भूमि अस्थि जल रेत अरु, तेज भूख पहिचान ॥
धावन पवन अकाश शिर, पांच निखालिस जान ॥ ८३ ॥
पांच अंश यों राखिके, भये बीश यौं लीन ॥
ज्यौं नर पगियां परसपर, बदलत प्रेम प्रबीन ॥ ८४ ॥
यह सब पंचीकरनको, तोसौं कह्यो विचार ॥
स्थूल देह धरि जीव यह, करत भोग संसार ॥ ८५ ॥
तीन देह तोसों कही, कारण सूक्षम स्थूल ॥
पांच काशके भेद पुनि, ताही मांय समूल ॥ ८६ ॥

भूमि हाडकासां, जळ वीर्यमां, तेज क्षुधामां, पवन दोडवामां, अने आकाश शिरमां मुख्यभागरूपे रहेल छे; अने बाकीना अंशोनी रसिक पुरुषो, जेम एक बीजानी पाघडीओ अदल बदल करीने बांधे छे, तेम एक बीजां भूतोए पोतपोतामां अरसपरसनी एकता जणाववामाटे पोताना अंशोनी एक बीजाथी बदली करेली छे.

हे शिष्य! जीवात्मा स्थूल देह धारण करीने संसारमां विविध प्रकारना भोगोने भोगवे छे. ते सघळानां कारणभूत एवां पांच महाभूतोनां पंचीकरणनो सघळो विस्तार तथा कारण, सूक्ष्म अने स्थूळ एवां त्रण देहनो विवेक पण कह्यो. हवे पांच कोश जे के ए त्रण देहना अंतरगत छे, ते पण विवेचनसहित सांभळ.

(कवित्त.)

अन्नमय स्थूल जान, प्राण प्राणमय बखान ॥
पांच कर्म इंद्री अरु, मन मनोमय है ॥
पांच ज्ञानइंद्र अरु, बुद्धि है विज्ञानमय ॥
कारण अविद्यासो तो, आनंदमय लख है ॥
तीन देहमांय पांच-कोश सुखदेव कही ॥
नीके सें बिचार देख, भ्रमीहिको भय है ॥
कोश नहि कोऊ कहुं, देह नहिं सोऊ एक ॥
आतमाको जोऊं जामैं, आनंदको चय है ॥ ८७ ॥

१ अन्नमय, २ प्राणमय, ३ मनोमय, ४ विज्ञानमय, अने ५ आनंदमय,–ए पांच कोश छे. तेमां जागृत अवस्थामां कारणरूपे जणातुं जे स्थूलशरीर ते अन्नमयकोश; जे के मातापिताए खाधेलां अन्नथी उपजेलां वीर्यथी उपजेल छे अने अन्नवडे ज वृद्धि पामे छे. ए स्थूळदेहने विषे पांच प्राण अने पांच कर्मेंद्रियरूप प्राणमयकोश छे. आ प्राणमयकोश शरीरमां परिपूर्णरूपे रहेलो छे अने बळने आपी, इंद्रियोनो प्रवर्तावनार छे. ए प्राणमयकोशनी अंदर पांच ज्ञानेंद्रिय अने मन, तेरूप मनोमयकोश छे. ते देहादिक पदार्थोमां अहंता–ममताने करनारो अने कामादिकोनुं स्थान छे. ए मनोमयकोशनी अंदर जे बुद्धिरूप विज्ञानमयकोश छे, ते कर्त्तानुं अभिमान करनारो छे. अने ए विज्ञानमयकोशनी अंदर सुषुप्तिना कारणभूत जे कारणशरीर ते आनंदमयकोश छे. ते अंतरमुखथी थनारी वृत्तिने निद्रामां लय पमाडे छे. ए पांचे कोश

सूक्ष्म अने अंदर छतां परस्पर मळेला छे. जेम पाणीमां रंग नाखीए तो ते पाणीमां सर्व स्थळे व्यापी जाय छे, ने तेमां वळी साकर नाखीए तो तेनुं गळपण पण पाणीमां मळी जाय छे. तेवी रीते ए सघळा एक बीजाथी सूक्ष्म होई परस्पर मळेला छेः कांदानां फोतरानी पेठे जदा जुदा नथी. स्थूलशरीरमां मात्र अन्नमयकोश ज रहेलो छे; सूक्ष्मशरीरमां प्राणमय, मनोमय अने विज्ञानमय, ए त्रण कोश रहेला छे; अने कारणशरीरमां एक आनंदमयकोश रहेलो छे. एवी रीते त्रण शरीरमां ए पांच कोश, आत्माना स्वरूपने ढांकी दई, स्वरूपनुं विस्मरण करावी संसार प्राप्त करावे छे. ते पांच कोशना आवरणने विचार वडे दूर करी, तेने केवळ भ्रांतिरूप ज समजे. आत्मा तो मात्र तादात्म्यभावथी ते ते कोशरूपें भासे छे. वास्तविक रीते आत्मा एके कोशरूप नथी. देह, प्राण, मन, बुद्धि, ए आदिक सघळां जड अने विकारी छे, परंतु आत्मा तो चैतन्यस्वरूप होई निर्विकार छे. एवी रीते आत्माने पंच कोश तथा त्रण शरीरोथी अलग जाणे, त्यारे परब्रह्मनी प्राप्ति थाय छे, अने निरूपाधिक अखंड सुखनो भोक्ता थाय छे.

शिष्य०:—

(चौबोला–चौपाया.)

संचित कर्मनतें पहिलेहि, स्थूलदेह तुम भाखी ॥
कर्मनके लच्छन सुनिवेकौं, मेरी मति अभिलाखी ॥८८॥

शिष्य०:–हे गुरो! संचितकर्मना पहेलां आपे स्थूलदेहने कह्यो तो ए कर्मो केटलां छे ने तेमनां शां लक्षण छे, ते कृपा करीने कहो.

गुरु०:—

(दोहा.)

संचित अरु प्रारब्ध मिल, क्रीयमान किय कर्म ॥
सुन सुत तोसौं कहत हौं, तिनके अद्भुत मर्म ॥८९॥

गुरु०:—हे शिष्य! संचित, प्रारब्ध अने क्रियमाण एवां त्रण प्रकारनां कर्मों छे, तेनां लक्षण तथा तेमां रहेलो जे अद्भूत मर्म, ते पण तुंने कहुं छुं ते सांभळ. जो के '**कर्मणा गहनो गतिः**' कर्मनी गति गहन छे, तेथी तेमनां खरां स्वरूपनुं विवेचन थई शकवुं मुश्केल छे; एटले के ते अदृष्ट विषय छे, तथापि यथामति कहुं छुं.

एक जन्मके कर्मफल, भुगेते जन्म अनेक ॥
संचित तासों कहत है, सुखदुख सहित विवेक ॥९०॥
एक जन्मके कर्मफल, भुगते दूजी देह ॥
सो प्रारब्ध कहावहीं, सुन अब सहित सनेह ॥ ९१ ॥

एक जन्ममां करेलां कर्मोनां फलो अनेक जन्मांतरोमां भोगववां पडे, तेने संचितकर्म कहे छे. करेलां कर्मोनो विपाक न थाय, त्यांसुधी ते सघळां कर्माशयमां प्रसुप्तावस्थामां पड्यां रहे छे. आ प्रसुप्तावस्थामां पडेलां कर्मोने संचित कहे छे.

अन्य जन्ममां अन्य देहथी करेलां कर्मोनो विपाक थएथी बीजा ज जन्ममां बीजा ज देहथी भोगववां पडे, तेने प्रारब्धकर्म कहे छे.

आ प्रारब्धकर्मनो पिता वक्ष्यमाण जे क्रियमाण कर्म ते छे. केमके करेलां कर्मो विपाकावस्थाने पामतां सुधी कर्माशयमां रही पाकेथी प्रारब्धरूपे थई भोग भोगवावे छ. देह धरीने जीव केवळ प्रारब्धकर्मो-ने ज परतंत्ररूपे भोगवे छे, ने नवीन पुरुषार्थरूपे कांईपण कर्म करवामां स्वतंत्र नथी एम कोई काळे थई शकतुं नथी. क्रियमाणकर्मोमांथी संचित थाय छे, अने संचितमांथी प्रारब्ध उपजे छे. जो कदाच पुरुषार्थरूपे नवीन कर्म करवामां जीवने स्वतंत्र न मानिये ने केवळ प्रारब्धनो ज भोक्ता गणिये, तो संचित के जेमांथी प्रारब्ध थाय छे, तेमां नवां न भळवाथी कोई काळने पामीने ज्यारे ते संचित थएलां कर्मो खूटी जशे, त्यारे पोतानी मेळे ज कर्म न होवाथी जीव, बंधनथी मुक्त थशे ने सर्व जीवोने मोक्ष स्वतः सिद्ध थशे; परंतु तेम नथी. हृदयकोशमां संस्कारद्रव्य अने स्वभावद्रव्य एवां बे द्रव्य रहेलां छे. संस्कारद्रव्य ए संचितोमांथी बनेलां प्रारब्धरूपे छे. अने स्व-भावद्रव्य के जेनावडे क्रियमाण (बीजां नवां) करवानी शक्ति अं-तःकरणमां रहेली छे, ए (स्वभावद्रव्य) तथा संस्कारद्रव्यमांथी जेनी प्रबळता वधारे ते तेटले दरजे पोतानुं कार्य बजावी शके छे. संस्कार-द्रव्यनी प्रबळता होय तो थता पुरुषार्थने दबावीने, एटले तेथी थतां कर्मोनां फळने संचितमां मेळवी दई, विपाकावस्थाने पामेलां कर्मोनां फळोने प्रथम भोगवावे छे अने संचितमां मळेलां ते कर्मो संकल्पबळना अनुसारे आ जन्म अथवा जन्म जन्मांतरमां विपाकावस्थाने पामीने

फळोनो भोग करावे छे–प्रारब्धनो ज विशेष भोग करावे छे. अने संस्कारद्रव्यनी प्रबळता होय तो ते प्रारब्धने दबावी, पुरुषार्थनी प्रवृत्ति विशेष करावे छे. बेमांथी एक पण द्रव्यनो अभाव अंतःकरणमां रहेतो नथी. कांईक अंशे एकनी प्रबळता थये बीजानो अंश रहे छे ज. आ द्रव्यो एक बीजानुं प्राबल्य थये पोताने आधीन करी प्रवर्तावी शकतां नथी; बन्ने पोतपोताना कर्ममां स्वतंत्र छे.

(सवैया.)

गर्भ वसे नरके पशुदेह, जरायुज योनि जहां पद पावै ॥
पंछिन आदि जु अंडज होत, निरंतर चाय जहां छवि छावै ॥
स्वेदसों स्वेदजकी उतपत्ति सु, चीलर आदि जुआ जूं कहावै॥
उद्भिज वृक्षन रूपनसों, इह भांतिन जीवन कर्म नचावै ॥९२॥

हवे कर्मनी प्रबळता दर्शावे छेः—

स्वकर्म फलानुसार जीव, क्वचित् जरायुज* योनिमां पशु अथवा मनुष्यना गर्भमां आवी, पशु अथवा मनुष्यदेहने धारे छे; क्वचित् अंडज योनिमां पक्षी आदिकना गर्भमां आवी, पक्षी आदिक देहने धारण करे छे; क्वचित् स्वेदज योनिमां आवीने अन्नना कीडा, जुवा तथा जू इत्यादिक देहोने धारण करे छे. अने क्वचित् उद्भिज-योनिमां आवी, वृक्षादिक देहोने धारण करे छे. आ प्रमाणे

---

* ओरमांथी उत्पन्न थाय ते जरायुज प्राणीओ कहेवाय छे. ईंडांमांथी उत्पन्न थाय ते अंडज, प्रस्वेद–परसेवाथी उत्पन्न थाय ते स्वेदज, अने जमीननी तळीआंने फाडीने जे नीकळे छे, ते उद्भिज प्राणीओ कहेवाय छे.

कर्म, जीवने आ ब्रह्मांडरूपी रंगभूमिउपर चोराशी लक्ष योनिओरूपी वेषो पहेरावी नाना प्रकारना नाचो नचावे छे.

कीट पतंग करे पशु पंछि, अधोगतिमैं जल जीव कहावै ॥
कै सुरलोक वसे सुर हो कर, कै सुर राजकी संपति पावै ॥
मानुष है सुखदुःख लहे, घर उंच रु नीचनके प्रकटावै ॥
आतम एक विचार विना, इह भांतिन जीवन कर्म नचावै॥९३॥

नीच-पापकर्मने करवावाळा जीवो कीट, पतंग तथा जळजीवनी तथा पशु-पक्षीनी अधम योनिने पामी, अधम गतिने पामेला कहेवाय छे. केमके ते योनिओमां (मोहवश थईने जीवे, तो ते काळे त्यां पण सुख मानेलुं छे.) दुःख ज रहेलुं ने सुखनो भोग तेमां जरा पण नथी. उत्तम-पुण्यकर्मने करवावाळा जीवो, इष्टापूर्त कर्म करीने उत्तम एवी देवयोनि पामी, देवलोकमां दैविक राज्यसंपत्तिनो भोग करे छे. अने समानकर्म करवावाळा जीवो, भूमंडळनेविषे मनुष्यदेह धारण करे छे; त्यां कर्मनी न्यूनाधिकताने लईने उंच अथवा नीचना घरमां जन्म धारण करे छे; अने त्यां सुख-दुःखवाळी बन्ने अवस्थाओनो भोग करे छे. मात्र एक आत्माना विचार विना कर्म, ए जीवने विविध प्रकारना नाच नचावे छे.

पुन्य करे सुरलोक लहे, अति पापनतैं सब नरकन धावै ॥
पुन्य रु पाप समान दुहू महि, मानुषके कुलमैं तन पावै ॥
जो सुखदेव ललाट लिख्यो, सुघटे न बढे अरु जाय न आवै ॥
आतम एक विचार विना, इह भांतिन जीवन कर्म नचावै९४॥

जीवने पुण्यनी बाहुल्यताथी देवताओना लोकनी प्राप्ति थाय छे;

पापनी बाहुल्यताथी अविचि आदि नरकादिक लोकनी प्राप्ति थाय छे, अने पुण्य तथा पापनी समानता रहेवाथी भूमंडलमां मनुना कुलमां मनुष्यनां शरीरनी प्राप्ति थाय छे. आमां स्वर्गादिक देवताओना लोक अथवा अविचि आदिक नरकना लोक, ए केवळ भोग भूमिओ छे; अने आ मनुष्यलोक, तेमां पण मात्र मनुष्ययोनि, एमां कर्म करवानी तथा भोग भोगववानी ए बन्ने प्रकारनी योग्यता छे. आत्म-अनात्म वस्तुनो यथार्थ विचार पण ए ज योनिमां थई शके छे. पण ए एक आत्मविचार विना, कर्म ए जीवने विविध प्रकारना नाच नचावे छे.

जाग्रतमैं सब विश्व बनाय, बिलास करे सब नैंन निहेरे ॥
ताकी हि बासना वासत है, सुपने महि आइ मनोरथ घेरे ॥
सूक्षम स्थूल शरीर दुहून, विलीनसु होत सुषुप्तिहि नैरे ॥
तीन अवस्थामैं दुःखसुख, लहे जन एक अदृष्ट न पैरे ॥९५॥

जीव जाग्रत अवस्थामां सर्व विश्व बनावी (दृष्टि सृष्टिवादने लईने) एम कहे छे. चक्षुरादि इंद्रियोवडे विविध विलासनो भोग स्थूल शरीरथी करे छे. घणाक काळथी अने घणा भोग भोगववाथी तेनी वासनावडे करीने अंतःकरण वासित थाय छे; एटले के ए वासना अंतःकरणमां जामे छे. ते वासनानुसार मिथ्या मनोरथो आवीने स्वप्नावस्थामां जीवने घेरे छे ने अनंत जातनां स्वप्नांओ उत्पन्न करे छे. ए स्वप्नावस्था सूक्ष्म शरीरथी भोगवे छे. सुषुप्ति अवस्थामां सूक्ष्म तथा स्थूल शरीर बेउ लीनावस्थाने पामे छे. ने त्यां जीवने

ए अवस्थामां तमःप्रधान कारणशरीरमां लई जईने अज्ञानानंद भोगवावे छे. ए त्रणे अवस्थामां भोगवातां सुखदुःख ए सवळां स्व अदृष्ट प्रभावानुसार भोगवे छे.

(दोहा.)

इच्छा अनिच्छा परनकी, त्रिविध कर्मके भोग ॥
जन्म आदि अरु मरनलौं, कहत विवेकी लोग ॥ ९६ ॥
कर्म होत प्रारब्धतैं, मूरख जानत नाहि ॥
मान लेत यह मैं करी, *क्रियमाण है जाहि ॥ ९७ ॥
ज्ञान उदय उर होतहीं, संचित कर्म नसात ॥
क्रियमानों होवत नहिं, प्रारब्धहि रहि जात ॥ ९८ ॥
देह तीन मैं जो कही, सर्व सहित विस्तार ॥
जातें तेरे चित्तमैं, उपजे ब्रह्म विचार ॥ ९९ ॥
पांच भूतकी देह यह, ताकों जूठी जान ॥
सत्य एक यह आतमा, सो विचार करि मान ॥ १०० ॥

ए कर्मना भोग त्रण प्रकारे भोगवाय छे—इच्छाथी, अनिच्छाथी अने परेच्छाथी. विषयीजनो इच्छाथी भोग भोगवे छे. रोगीजनो अनिच्छाथी भोग भोगवे छे अने महात्मा पुरुषो परेच्छाथी भोग भोगवे छे. आ भोगो हरकोई प्रकारे जन्मथी मरणपर्यंत भोगवाय छे ज.

जेटलां कर्म थाय छे, तेटलां पोतानां प्रारब्धने लईने ज छे, छतां मोहवशताथी तथा अज्ञानताथी मूर्ख प्राणी 'अमुक में कर्युं' एम जे माने छे, ते क्रियमाण. ज्यारे निजांतरनेविषे आत्मानो साक्षात्कार

---

* ग्रन्थकार क्रियमाणने मानता नथी; तेओना मनथी जे थाय छे, ते प्रारब्धानुसार ज थाय छे. आम मानवुं ए प्रारब्धवादीनुं छे. वास्तविक क्रियमाणनुं स्वरूप पूर्वे प्रारब्धनुं वर्णन करतां टीकाकारे जणावेलुं छे.

थाय छे, त्यारे ज्ञान प्रकटी, संचित कर्मोनो नाश थई जाय छे. पछी क्रियमाण कर्म थतां नथी. मात्र प्रारब्ध ए (कुलाल चक्र न्यायथी) रही जाय छे. वास्तविकताथी तो—

ज्ञानाग्निः सर्व कर्माणि भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।

(ज्ञानरूपी अग्नि सर्व कर्मोने बाळी भस्म करी नाखे छे.) ए भगवद्वचनथी तो एवुं ज्ञापित थाय छे के पूर्वोक्त त्रणे कर्मो ज्ञानाग्निथी बळीने निःशेषावस्थाने पामी जाय छे. कदाच एम कहो के, ज्ञान थयेथी सर्व कर्मोनो नाश थई गयो, माटे देह पण कर्मनो अभाव थयाथी रहेवो न जोईए; पण तरत ज नाशभावने पामवो जोईए. तो आ शंका योग्य नथी. केमके संचितमांथी विपाकावस्थाने पामीने प्रारब्धरूपी परिणामने पामेलां कर्मो, एवा संकल्पबळथी ऊठेलां छे के ते पोतानो भोग आप्यासिवाय रहेनार नथी, अने तेथी ज ऊपर तेने कुलालचक्र न्यायनी उपमा आपवामां आवी छे. जेवी रीते कुंभारे काम करतीवेळा चाकऊपर माटीनो पिंड मूकी, दंडवडे जे गति आपेली छे, ते गति कदापि वासण उतरी रहेशे ने कुंभार चाल्यो जशे, परंतु एकदम बंध पडनार नथी. ए गति पोतानो अवसान काळ आवे पोतानी मेळे बंध पडशे, तेवी रीते संचितमांथी छूटां पडेलां ते प्रारब्धोने एवी गति अपाई गई छे, के ते पोतानो फलभोग करावी रहेथी आपोआप बंध पडी जशे. तेथी ज्ञानप्राप्ति थई गई, छतां पण पोताना संकल्पबळथी ऊठेलां प्रारब्धकर्मो, के जेने

बळपूर्वक गति अपाई गई छे, ते तो पोतानो फलभोग कराव्यासिवाय नाशभावने पामनार ज नथी. तेटलामाटे ज कह्युं छे केः—

अवश्यं भावि भावानां प्रतिकारो भवद्यदि ॥
तदा दुःखैर्नलिप्येरन् नलरामयुधिष्ठिराः ॥ १ ॥

भावार्थ—प्रारब्ध के जे अवश्य भावी छे, तेना भावनो जो कदि अटकाव थई शकतो होत तो नळ, राम अने युधिष्ठिर जेवा राजाओ दुःखथी दबात नहि. केमके तेओ कांई ओछा समर्थ नहोता; तेथी–**प्रारब्धं भोगतोनश्येत शेषं ज्ञानेन दह्यते ॥**

प्रारब्धकर्मनो नाश, भोगव्याथी ज थाय छे, अने बाकी ज्ञान वडे करीने नाश पामे छे.

हे शिष्य! विस्तारसहित त्रणे *देहनो विचार में तने कह्यो; के जे विचारवाथी सघळां तने अनित्य जणाई ब्रह्मसंबंधी विचार उपजे.

पंचभूतात्मक जे आ देह छे, ते मिथ्या छे. अने सत्य तो एक परमात्मा ज छे, ए तारे निश्चयथी समजवुं.

(सवैया.)

भौक्तिक देह सदा जड है, इक आतमचेतन जोतिहि मानौं ॥
देह अनित्य मरे जनमे अरु, आतम एक अखंडित जानौं ॥
देखत देह अमंगल रूप, सुआतम शुद्धहि ईश बखानौं ॥
ता कुहुं एक कहे नर मूढ, कहा उनतैं पशु और हि जानौं॥१०१॥

---

* देह अमंगल स्वरूप छे के नहि, तेनी खात्री करवी होय तो वर्णवेला प्रत्येक पदार्थो जुदा करी जूओ.

हवे देहात्मवादिनुं खंडन करे छे तथा आत्मा देहथी भिन्न छे एम प्रतिपादन करे छे.

'देह एज आत्मा छे' एम कहो तो पांच भूतथी उपजेलो आ देह जड छे अने आत्मा ए चैतन्यस्वरूप ज्योतिर्मय छे. देह ए जन्म-मरणना विकारवाळुं होई अनित्य छे. अने आत्मा नित्य होई अखंडित छे. देह ए हाड, चर्म, मूत्र, मांस, रुधिर, मेद, रोम, नाडि वगेरेना समूहरूपे होई, अमंगळ स्वरूप छे अने आत्मा शुद्ध मंगल स्वरूप अने सर्व सत्ताधीश छे. एवा विरुद्ध धर्मवाळा आत्माने तथा देहने जे एक कहे छे तेमां ने पशुमां (समज विषयमां) शो फेर छे? कदाच देह ज आत्मा हते तो, मरण थवां पछी पण देहमां चैतन्य रहेत अने तेथी,—**शरीरस्य न चैतन्यं मृतेषु व्यभिचारतः** ए वचन योग्य छे.

(दोहा.)

षट विकार है देहके, वे आतम के नांय ॥
सुन अब तिनके नाम अरु, समुझ देख मनमांय ॥ १०२ ॥
उपजत है पुनि बढत है, बाल युवा पुनि होइ ॥
वृद्ध होत पुनि मरत है, षट विकार यह जोइ ॥ १०३ ॥
दशों दोष पुनि देहमें, तिनकर आतम हीन ॥
सुन अब तिनके नाम सब, कहत यथा परबीन ॥ १०४ ॥

वळी देहनेविषे षड् विकार पण जोवामां आवे छे, अने आत्मा विकारोथी रहित निर्विकार छे. (ए छ विकारोनां नाम गणावे छे) ते वक्ष्यमाण छ विकारोने सांभळीने विचार कर.

१ जायते (जन्मवूं), २ अस्ति (जन्म्या पछी हयातीमां आ-ववुं), ३ वर्धते (वधवुं), ४ विपरिणमते (फेरफार थवो), ५ अपक्षीयते (क्षयने पामवुं) अने ६ विनश्यति (नाश पामवुं) ए जे छ विकारो कहेवाय छे, ते देहनाविषे प्रत्यक्ष जोवामां आवे छे; तेमज निम्नलिखित दश दोषो पण देहनेविषे जोवामां आवे छे; अने आत्मा तो ए दशे दोषथी रहित छे. ते दश दोष जणावे छे

(सवैया.)

अशुद्ध अशौच भरी दुर्गंधि, लहौं बहु खंड रु स्थूल निहारौं ॥
रोग ग्रसे बहु भांति जरे, शिथिले पुनि आमिष औ कृमि वारौं ॥
होत न होत घने दिनमैं, छिनमैं न सजात न लागत वारौं ॥
देह सदा दश दोष भरी, अरु आतम नित्य अदोष विचारौं १०५

१ देह ए अत्यंत मलिन छे; २ अत्यंत अपवित्र छे; ३ अनेक प्रकारनी दुर्गंधीओ पण देहमां भरेली छे; ४ केटलाक टुकडा-ओ मळीने देह बनेली छे (अखंड नथी); ५ देह ए अति स्थूल छे; ६ नाना प्रकारना रोगोनुं आयतन अथवा स्थान छे; ७ त्रिविध तापवडे बळ्या करे छे. ८ क्रमे करी जीर्णावस्थाने पामे छे; ९ नाना प्रकारना कृमि–कीटादिकनां स्थानरूप छे; १० तथा घणेक प्रय-त्ने केटलांक वर्षो जाळवी राखेली ते क्षणभरमां नष्ट थई जाय छे. (क्षणभंगुर छे) अने आत्मा तो ए दश दोषोरहित अदोष होई नित्य छे.

(दोहा.)

वेद कहत सो मैं कहत, तुम फिर चित्त विचार ॥
आतमचेतन नित्य है, देह अनित्य निहार ॥ १०६ ॥

वेदांतादि शास्त्रोए जे प्रतिपादन करेल छे, ते में तने संक्षेपे कह्युं, तेनुं तुं चित्तमां चिंतन कर. अने हे शिष्य! एवो सुदृढ निश्चय कर के देहादि अनित्य तथा जड छे अने आत्मा ए नित्य तथा चैतन्यस्वरूप छे.

शिष्य०:—

आप कही सो मैं लखी, स्थूल देह मैं नांहि ॥
याहि छोर औराहे धरत, लिंगदेह मैं आहि ॥ १०७ ॥

शिष्य०:—हे गुरो! आपें कह्युं ते हुं बराबर समज्यो के आ प्रत्यक्षरूपे देखाती जे स्थुलदेह, ते हुं नथी. पण ज्यां एम विचार करी निश्चय करुं छुं, त्यां वळी १७ तत्त्ववाळी जे लिंग-सूक्ष्मदेह ते हुं छुं, एम ध्यानमां आवे छे. तो ते वात ठीक छे के केम, ते कृपा करी कहो.

गुरु०:—

पंच भूत जड जो कही, सूछमकी उत्पत्त ॥
अलख अखंड रु नित्य है, तुं तो आतम सत्त ॥ १०८ ॥

गुरु०:—हे शिष्य! तने प्रथम ज कहेवामां आवेलुं छे के पांच भूत छे, ते पण जड छे; तो तेनुं कार्य जे सूक्ष्मदेह ते केवी रीते चैतन्यस्वरूप थई शके? तेथी जड होवाथी सूक्ष्मदेह पण अनित्य छे; अने तुं तो आत्मा होवाथी अलक्ष, अखंड, नित्य तथा सद्रूप छे.

शिष्य०:—

सूछम देह सुजड कही, प्राण होइ चैतन्य ॥
तासु कार्य चैतन्य है, कै दश इंद्रिय अन्य ॥ १०९ ॥

शिष्य०:—हे गुरु! आपे जे सूक्ष्मदेहने जड कह्यो तो ते वास्तविक छे, पण आ प्राण तो चैतन्यस्वरूप छे? अने तेने लईने इंद्रियो पण चैतन्यस्वरूप छे, ए वात सत्य के नाहि?

गुरु०:—

सोवतमैं भूषण हरै, जानत नांहि न कोइ॥
प्राण होइ चैतन्य तो, पकरै चौर हि सोइ॥ ११०॥

गुरु०:—प्राण ए चैतन्यस्वरूप होई आत्मा नथी; केमके निद्रावस्थामां इंद्रियो विषयाभावने पामेली होय छे, ने ते काळे चोर लोको वस्त्राभूषणादिक धननुं अपहरण करी जाय छे. प्राण जो ते वेळा चैतन्यस्वरूप होत तो ते चोरने अवश्य पकडते; परंतु तेम नथी थतुं, तेथी प्राण ए चैतन्यस्वरूप आत्मा नथी. प्राण ए सुषुप्तिमां पण जागे छे, तेथी तेने प्राणात्मवादीओ आत्मा कहे छे; ने श्रुतिमां (अन्नमयथी भिन्न अने अंतर वर्तता एवो प्राणमय आत्मा छे.) एम ज्यां लखेलुं छे त्यां प्राणने आत्मत्व सिद्ध थवामाटे लखेलुं नथी, पण ए वाक्यथी तो मात्र प्राणमयकोशनुं विस्तारथी वर्णन करायेलुं छे. आथी भ्रांतिमां पडीने प्राणवादीओ प्राणने आत्मा कहे छे, परंतु प्राण ए जड छे, तेथी आत्मा नथी.

(सवैया.)

कानको काम न नाक करे, अरु नाकको काम न कानतैं होई॥
आंखको काम न जीभ करे, अरु जीभको काम न आंखतैं होई॥
हातको काम न पांऊं करे, अरु पांऊंको काम न हाततैं होई॥
ज्ञान न ओर विषें रस इंद्रिय, क्यौं करके वह चेतन होई॥१११॥

हवे इंद्रियोने आत्मा मानवावाळानुं खंडन करे छे.

कदाच प्राण ए आत्मा नथी, पण इंद्रियो ए आत्मा छे, एम कहे तो ते पण संभवतुं नथी. केमके, काननुं काम नाक करी शकतुं नथी. आंखनुं काम जीभ करी शकती नथी अने जीभनुं काम आंखथी थई शकतुं नथी. हाथनुं काम पग करी शकता नथी अने पगनुं काम हाथथी थई शकतुं नथी. आथी एम स्पष्ट जणाय छे के इंद्रियोनेविषे सर्वज्ञत्व नथी. जेनाविषे सर्वज्ञत्व न होय ते आत्मा नथी; जेमके घट. घटनेविषे सर्वज्ञत्व नथी तेथी ते जेम जड छे, तेवी ज रीते इंद्रियोनेविषे पण सर्वज्ञत्व न होवाथी तेओ पण जड छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

स्वाद पदारथ औरको, इंद्रिय जानत नांहि ॥
तातैं वे जड है सबैं, चैतन है मनमांहि ॥ ११२ ॥

शिष्य०:—हे गुरु! पोताथी अतिरिक्त विषयनो अनुभव लेवामां इंद्रियो अशक्त छे तेथी तेमां आत्मत्व नथी, एम आपे कह्युं ते योग्य छे. पण मन तो सर्वना रसनो अनुभव ले छे अने तेथी तेनाविषे भोक्तापणुं सिद्ध थाय छे, तेथी ते चेतन छे, एम कहीशुं. वळी श्रुतिमां पण ' आ आत्मानो मनोमय छे ' एम कहेलुं छे.

गुरु०:—

पांच तत्वके अंश मिलि, मन उपज्यो यह जान ॥
सब इंद्रिनके स्वादकी, तातैं है पहिचान ॥ ११३ ॥

ગુરુ૦:—પાંચે મહાભૂતોના અંશોના મળવાથી મન થયેલું છે, તેથી એ માત્ર ઇંદ્રિયોના સ્વાદને જાણે છે. વાસ્તવિક રીતે મન એ ચેતન પદાર્થ નથી. શ્રુતિમાં જે अन्योऽन्तरआत्मामनोमयः (પ્રાણમયકોશથી અન્ય અંદરનો, જે મનોમય તે આત્મા છે) એમ કહેલું છે, તેથી મનોમયકોશનું વર્ણન કરેલું, તેનો આશય મનને આત્મા કહેવાનો નથી.

बात सुनत सुनतो नाहिं, कहत न थो मन ठोर ॥
तातैं यही बिचार कर, चैतन है कोइ और ॥ ११४ ॥
सुषुप्तिमैं इंद्रिय सहित, मिल्यो ज्युं मन अज्ञान ॥
जागत है तब कहत है, आज नाहि न कोइ भान ॥ ११५ ॥
स्वप्न न देख्यो है कछू, सोइ गयो यहि रीत ॥
जिहि जानी सोइ जान अब, यही ज्ञानकी रीत ॥ ११६ ॥

મન પણ ચેતનપદાર્થ નથી; કેમ કે જ્યારે આપણે કોઈથી વાત કરતા હોઈએ છીએ અથવા કોઈ વિષયમાં તલ્લીન થઈ ગયા હોઈએ છીએ, ત્યારે પાસેનાંમાંથી બીજું કોઈ કંઈ કહેતું હોય તોપણ તે સાંભળતા નથી. અને જ્યારે તે પૂછે કે 'મેં કહ્યું તે સાંભળ્યું' ત્યારે પ્રત્યુત્તર આપવો પડે છે કે 'તે વેળા મારૂં મન ઠેકાણે નહોતું, હવે ને કહેતા હો તે કહો.' જ્યારે એમ કહેવાય છે, ત્યારે મન ઠેકાણે હતું કિંવા ન હતું, તે જાણનાર તેનાથી કોઈ બીજો છે ને મન અલ્પજ્ઞ છે, એમ વિચાર કર્યાથી સ્પષ્ટ જણાય છે. માટે મન એ પણ આત્મા નથી. વળી નિદ્રામાં ઇંદ્રિયો સાથે મન પણ વિલીનતાને પામી જાય છે. તે જાગે છે, ત્યારે કોઈ બાબતસર પૂછતાં 'મને કાંઈ ભાન નહોતું; નિદ્રા એવી

आवी गई हती के तेथी हुं कांई जाणतो नथी.' एम जे जाणे छे ते ज साक्षीभूत सर्वात्मा छे.

पांच तत्वतैं होत मन, ज्ञान भये मिटि जात ॥
ताकों नश्वर जानिये, जाकी उत्पत्ति पात ॥ ११७ ॥
सदा अनादि अनंत जो, सो तुंहि आपोआप ॥
तातैं यहो विचारके, छोड अज्ञकु तात ॥ ११८ ॥

मन ए तो पांच तत्त्वना अंशो मळीने थएलुं छे अने ज्ञान थया-पछी रहेतुं नथी, तेथी ते नश्वर छे. जेनी उत्पत्ति अने नाश थाय छे ते अनित्य पदार्थ छे; अने तुं तो नित्य, अनादि, अनंत छे. तेथी हे तात! विचारवडे अज्ञाननो त्याग करः ताराथी आत्मा भिन्न नथी, तुं पोते ज आत्मा छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

सतरहमैं सोलह कहे, बाकी रही ज्युं बुद्धि ॥
जानत हौं चेतन वही, जाकों सबकी शुद्धि ॥ ११९ ॥

शिष्य०:—हे देव! आपें पदार्थो—तत्वोमांथी १६ पदार्थो तो आत्मा नथी एम कह्युं, त्यारे बाकी रहेल जे बुद्धि ते शुं आत्मा छे? केमके तेने तो सर्व वातनी शुद्धि छे, माटे तेने चेतनरूप समजुं छुं ए ठीक छे के केम?

गुरु०:—

अहंकार मन बुद्धि चित, एक कहावत चार ॥
एक कहत है बुद्धि मन, अंतःकरण विचार ॥ १२० ॥

जैसें वायु एकके, नाम कहावत पांच ॥
तैसें अंतःकरणके, च्यारि भेद पुनि सांच ॥ १२१ ॥
जब चाहत है वस्तुकुं, चित्त कहत है ताहि ॥
यत्न कल्पना जब करे, मन कहियत है वाहि ॥ १२२ ॥
मैं यह लीनो लेत हुं, अहंकार यह जोय ॥
सबको जब निश्चय करे, बुद्धि नाम है सोय ॥ १२३ ॥
जैसें ब्राह्मण एकके, नाम क्रियातैं दोय ॥
रोटी करे रसोईया, पढे तब पंडित सोय ॥ १२४ ॥

गुरु०:—हे शिष्य! कोई अहंकार, मन, बुद्धि अने चित्त ए चार प्रकारथी अने कोई केवळ मन तथा बुद्धि एम बे भेदथी कहे छे, परंतु ते एक अंतःकरणना ज विभाग छे; मात्र जुदां जुदां काम करनारां होवाथी–उपाधिभेदने लईने तेने अलग पाडीने गणावे छे. जेवी रीते शरीरमां संचार करनारो वायु एक ज छे, छतां उपाधि-भेदवडे करीने ते प्राण-अपानादिक भेदवडे करीने पांच प्रकारनो कहे-वाय छे, तेवी ज रीते अंतःकरण एक ज छतां कार्यभेदथी तेना चार विभाग पाडेला छेः—ज्यारे चाहना अथवा चिंतन करे छे, त्यारे 'चित्त' कहेवाय छे; ज्यारे संकल्प विकल्प करे छे त्यारे मन कहेवाय छे; ज्यारे 'में आ लीधुं ने आ लईश तथा आ मारुं छे' एवुं ममतापूर्वक अभिमान करे छे, त्यारे ते 'अहंकार' कहेवाय छे; अने ज्यारे कोईपण वातनो निश्चय करे छे, त्यारे ते 'बुद्धि' कहेवाय छे. जेवी रीते क्रियाना भेदवडे करीने एक ज ब्राह्म-णनां बे नाम थाय छेः रसोई करे त्यारे रसोईओ अने अध्ययनादिक

करे त्यारे पंडित कहेवाय छे. तेवी रीते अंतःकरणसंबंधी समजवुं.

आतम बुद्धिसों परो, यह ज्यौं कहि भगवान ॥
अरु पुनि आतमबोधमैं, शंकर बोधि विधान ॥ १२५ ॥
इंद्रिय पर है देहतैं, मन इंद्रिय तैं जोय ॥
बुद्धि कही मनतैं परे, तातैं आतम सोय ॥ १२६ ॥
सुख दुख इच्छा राग ये, सकल बुद्धिगत धर्म ॥
सुषुप्तिमैं मेटत सबै, रहत आतमा पर्म ॥ १२७ ॥

परमात्मा श्रीकृष्णभगवाने "श्रीमद्‌भगवद्‌गीता"मां स्पष्ट कह्युं छे के,—**यो बुद्धेःपरतस्तुसः** (बुद्धिथकी जे पर छे, ते ज आत्मा छे.) तेम ज भाष्यकार भगवान् शंकराचार्यजीए पण "आत्मबोध" मां कहेलुं छे के,—

देहेंद्रिय मनोबुद्धि प्रकृतिभ्यो विलक्षणम् ॥
तद्वृत्ति साक्षिणं विंद्याद्दात्मानं राजवत्सदा ॥ १ ॥

भावार्थः—जेम राजा पोतानी सभामां बेठेला पुरुषोनो साक्षी तथा प्रेरक होई तेनाथी जूदो छे, तेम आत्मा पण शरीर, इंद्रिय, मन, बुद्धि अने प्रकृति, ए सघळांथी विलक्षण छे.

स्थूल शरीरथी इंद्रियो श्रेष्ठ छे, इंद्रियोथी मन श्रेष्ठ छे, मनथी बुद्धि श्रेष्ठ छे, बुद्धिथी आत्मा श्रेष्ठ छे. सुख, दुःख, राग, द्वेष, इत्यादिक धर्म बुद्धिना छे. सुषुप्ति अवस्थामां बुद्धिनो लय थई जाय छे, अने आत्माराम ज त्यां मात्र प्रकाश करी रहेला छे. आत्मारामना आ धर्मो न होवाथी ते निर्विकारी छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

कह्यो आप समुझ्यो सकल, देह दोय मैं नांय ॥
अब आतम कासों कहो, यह शरीरके मांय ॥ १२८ ॥

शिष्यः—हे गुरु! आपे कह्युं ते हुं पूर्ण रीते समज्यो के स्थूळ अथवा सूक्ष्म ए बे शरीरमांथी हुं एके नथी, त्यारे शंका थाय छे के आप आत्मा ते आ शरीरमां कोने कहो छो?

गुरु०:—

न्यारे न्यारे तैं लखे, सबही के गुनरूप ॥
जानत नांहि आपकों, यह अज्ञान अनूप ॥ १२९ ॥

गुरु०:—तने सघळांनां स्वरूप जूदां जूदां करी देखाड्यां, अने तेना गुण पण देखाड्या, छतां तेथी अलग जे पोते, तेने समजतो नथी, ते अज्ञान ने ते ज कारणशरीर कहेवाय छे.

कारण मूल उपाधिको, यही तीसरी देह ॥
आदि न ताको जानिए, अंग ज्ञानको गेह ॥ १३० ॥
अहंकार बुद्धिसौं कहे, तुं मति देहु जगाय ॥
उठि हैं परमानंद तो, मैं तुं जगत विलाय ॥ १३१ ॥

श्रीजुं कारणशरीर ए ज सघळी उपाधिनुं कारण छे; ए कारणशरीर अनादि अने केवळ अज्ञाननुं घर छे. तेमां रहेनारो अहंकार ते वारंवार बुद्धिने कहे छे के,-'तुं ए परमानंदनी निकट रहेनारी छे, वास्ते कृपा करीने एने जगाडीश नहि. जो कदाच ए परमात्माने जगाडीश तो हुं, तुं, अने जगत् ए सघळांनो लय थई

जशे.' कहेवानुं तात्पर्य एटलुं ज के–ज्ञानरूपी सूर्यनो प्रकाश थशे तो आपणी कारणभूत जे अविद्या, के जेमां आ सकल विश्व वास करी रह्युं छे, तेरूपी अंधकारनो नाश थई जशे.

यही अविद्या नींद है, स्वप्नतुल्य संसार ॥
ब्रह्म लखे जब आपकौं, जागृत तबैं विचार ॥ १३२ ॥

आ अविद्या ए निद्रा छे. तेमां आ सघळो संसार स्वप्नरूप छे, अने नहि छतां भासी रह्यो छे. कदाच एम कहो के न होय ते पदार्थ भासे केम? परंतु तेम कही शकाय नहि. केमके मृग–जळादिक नहि छतां पण जेम भासमान् थाय छे, तेम अविद्यारूपी निद्रावस्थामां आ संसाररूपी स्वप्न थएलुं छे. 'हुं पोते ज सच्चिदानंदस्वरूप ब्रह्म छुं,' एवुं जे यथार्थ ज्ञान थयुं, ते ए अविद्यारूपी निद्रामांथी जागेल भावने पामेली एवी जागृतअवस्था छे.

शिष्य०:—

रूप कौन है ब्रह्मको, किहि विध बसे शरीर ॥
कहियै मोसौं प्रकट कर, जो नसाय भ्रमभीर ॥ १३३ ॥

शिष्य०:—हे गुरु! ए ब्रह्म शुं छे अने शरीरमां कयी रीते बसे छे, ते स्पष्ट करी कहो; के जेथी थयेला भ्रमनो निवृत्ति थाय.

गुरु०:—

(कवित्त.)

मन बुद्धि इंद्रिनके, कारन चलाईवेकौं ॥
सकल उपाधिनतैं, न्यारो रहे गातमैं ॥

जैसें घट मठमध्य, राजत आकाश और ॥
न्यारो सुख दुःखहीतैं, देखो अवदातमैं ॥
जैसें रविजोत आगे, नींदमैंसे जीव जागे ॥
उठि उठि (कर) काम लागे, सबै परभातमैं ॥
अज आविनाशी, परिपूरन प्रकाशी सुख-
देव सुखराशी, ऐसो नित्य लखो आतमैं ॥ १३४ ॥

आत्मा सर्वसत्ताधीश छे, एवुं जणाववा माटे आत्मस्वरूपनुं वर्णन करे छे.

मन, बुद्धि तथा इंद्रियोने पोतपोताना कार्यमां नियुक्त करवाने-वास्ते सर्व उपाधिथी अलग रही, आ आत्मा शरीरमां वास करे छे. जेवी रीते घटनेविषे घटाकाश तथा मठनेविषे मठाकाशरूपे आ महदाकाश रहेलुं छे, छतां तेनो तेने जरा पण संबंध नथी; तेवी रीते आत्मा, देह-इंद्रिय आदि सर्वमां व्याप्त छतां, सुख-दुःखादि धर्मो-साथे कांई संबंध नथी. जेवी रीते सूर्यनो प्रकाश पामीने जीवो नि-द्रामांथी जागीने पोतपोताना काममां लागे छे, तेवी रीते आत्मानी सत्ता पामीने मन, बुद्धि आदिक सत्तावाळां थईने स्वविषयनेविषे प्रवर्त थाय छे. जन्मरहित, अविनाशी, सर्वव्यापी, स्वयंप्रकाश अने नित्य तथा सुखनो भंडार एवो आ आत्मा छे.

दाहक प्रकाशक है, पावक ज्यौं काठमांहि ॥
चेतन प्रकाशक है, बुद्धि मन गातमैं ॥
मन चक्षु आदिहुंतें, न्यारो सब काल जान ॥
मन चक्षु आदिहुंमें, मन चक्षु तातमैं ॥

मन चक्षु आदिहुतैं, पाइयें न जाको रूप ॥
अतिहि अरूप और, अद्भूत बातमैं ॥
अज अविनाशी, परिपूरन प्रकाशी सुख-
देव सुखराशी, ऐसो नित्य लखो आतमें ॥१३५॥

काष्टनेविषे जेवी रीते प्रकाश धर्मवाळो तथा दाह धर्मवाळो अग्नि रहेलो छे, तेवी रीते मन, बुद्धि तथा शरीरमां आत्मा रहेलो छे. मन तथा चक्षु आदि, अंतर तथा बहिर्करणोथी ए सर्वथा न्यारो छे, छतां तेनाविषे व्याप्त छे. अंतःकरण तथा इंद्रियोवडे ते पामी शकाय तेवो पण नथी, केमके ते रूपवाळो नथी. तेनुं स्वरूप, सर्व वाते अद्भूत अने अवर्णनीय छे. जन्मथी रहित, अविनाशी, परिपूर्ण, प्रकाशवान् अने नित्य तथा सुखनो भंडार एवो आत्मा छे.

मुखको अभास जैसें, दर्पनमैं देखियत ॥
मुखतैं न न्यारो ज्यौंही, गनियत है बातमैं ॥
ऐसैं ब्रह्मचेतनको, बुद्धिमैं अभास पर्यो ॥
ताहीकौं कहत जीव, व्याप्यो सब जातमैं ॥
दर्पनके टारे प्रतिबिंब मिट जात जैसें ॥
ब्रह्मके विचारे देखो, जीव मिटि जात मैं ॥
अज अविनाशी परिपूरन प्रकाशी सुख-
देव सुखराशी, ऐसो नित्य लखो आतमैं ॥१३६॥

जेवी रीते दर्पणमां मुखनुं प्रतिबिंब जोइये छिये, अने तेने जेम मुखथी भिन्न गणता नथी, तेवी रीते ब्रह्म चैतन्यनुं प्रतिबिंब बुद्धिना अंदर पडेलुं छे. तेने चिदाभास अथवा जीव कहे छे, के जे सर्व

जातीओमां रमी रह्यो छे. दर्पणने टाळवाथी जेम प्रतिबिंब मटे छे, तेम अविद्याने टाळवाथी ब्रह्मरूपी बिंबनुं जीवरूपी प्रतिबिंब मटी जाय छे. जन्मथी रहित, नाशथी रहित, परिपूर्ण, प्रकाशक, सुखरूप अने नित्य एवो आ आत्मा छे.

रविको प्रकाश पाय, लोचन विलोके रूप ॥
तैसें ब्रह्मसूर्यको, प्रकाश अवदातमें ॥
जैसें एक सूतमांय, मनिगनको पोहियत ॥
तैसें एक चेतन देख, बुद्धि मन गातमें ॥
सबनमें एक यह, सबहीतें न्यारो रहै ॥
गगन समान नांय, मिले कोउ बातमें ॥
अज अविनाशी, परिपूरन प्रकाशी सुख-
देव सुखराशी, ऐसो नित्य लखो आतमें ॥१३७॥

सूर्यनो प्रकाश पामीने नेत्र जेम रूपने जोय छे तेम ब्रह्म चैतन्यरूपनो प्रकाश पामीने देहादिक पदार्थो प्रकाशवाळा थाय छे. वळी आ सूत्रात्मा सर्वव्यापक छे. जेम जूदा जूदा पाराओ एक ज दोरामां परोवाएला छे, तेम आ ब्रह्म-चैतन्य, सर्वत्र मन-बुद्धि-शरीरादिकमां व्यापी रहेल छे. सर्वनेविषे ए एक ब्रह्म ज व्यापक छतां सर्वथी न्यारो छे. जेवी रीते आकाश सर्व समान छतां कोईनी कोई वातमां नथी, तेवी ज रीते आ आत्मा सर्वत्र व्यापी रहीने, कोईनी कोई वातमां नथी. एतो केवळ अजन्मा, अविनाशी, परिपूर्ण, प्रकाशी, सुखरूप तथा नित्यस्वरूप छे.

सच्चिद स्वरूप एक, आतमको बिंब परै ॥
बुद्धिकी उपाधिनतैं, अनेक लेखियतु है ॥
जैसें सूर्य एक ताको, अंशु सब नैनमांय ॥
झलकत प्रताप न्यारो, न्यारो पेखियतु है ॥
कर्मवश जीव सुख–दुःखनुको भोग करे ॥
ऊंच नीच मध्य योनि, जन्म देखियतु है ॥
पवन बश जैसें जल, सरुवरको चंचल होत ॥
वाके बिन कहुं सुख, स्थिर देखियतु है ॥१३८॥

जो के बुद्धिरूपी उपाधि अनेक छे, परंतु तेमां सच्चिदानंद स्वरूप एक आत्मानुं ज प्रतिबिंब पडे छे. जेवी रीते सूर्य एक ज छे ने तेनां किरणो सर्वनी आंखमां पडे छे, तेथी सौ तेने पोतपोतानी आंखोथी जूदो जूदो जोइये छिये. पोतपोतानां कर्मोने वश थईने जीवो अनेक प्रकारनां सुख दुःखोनो भोग करे छे, तथा उच्च अने नीच योनिओमां वारंवार जन्म्या करे छे. पवनना चालवाथी तळावनुं पाणी जेम चंचळ थाय छे, हाले छे, अने पवनना बंध पडवाथीं जळनुं चालवुं पण बंध पडे छे; अर्थात् जळनुं हलन–चलन जेम पवनने आधीन छे, तेम जीवनुं उच्च-नीच योनिओमां जवुं ए सर्व कर्मने आधीन छे.

दीठकौं छिपावे घन, अज्ञ जानैं भान छिप्यो ॥
ऐसें शुद्ध आतमकौं, बुद्धि अनुमान्यो है ॥
कहे सुखदेव जैसें स्फाटिकके पास रंग ॥
जैसो धर्यो वैसो जाय ताय माहिं ठान्यो है ॥

जैसेँ जलमांय परे प्रतिबिंब आननको ॥
जलके हिलाये बिंब, हिलतसो जान्यो है ॥
ऐसें जड बुद्धिमांय, चिद् प्रतिबिंब देखी ॥
मूढ जानैं ब्रह्म जाय, जगतमांय सान्यो है ॥१३९॥

वादळ आपणी दृष्टिनी गतिने रोके छे ने आपणे जाणीए छीए के सूर्य ढंकायो छे; तेवी रीते शुद्ध आत्मा बुद्धिवडे ढंकाएलो छे एवुं अनुमान कराय छे. स्फाटिकनी पासे जेवो रंग धरशुं तेवा रंगवाळुं स्फाटिक जणाशे. स्फाटिकनो पोतानो कोई रंग नथी. तेम ज आत्मानी सन्मुख जे पदार्थ रहेशे तेवा धर्मवाळो आत्मा जणाशे. आत्मानो पोतानो कोई धर्म नथी. जळमां पडेलुं मुखनुं प्रतिबिंब जळना हलाव्याथी हाले छे, तेवी रीते जडबुद्धिमां आत्मानुं प्रतिबिंब जोईने मूढ एम समजे छे के आत्मां जगत्मां फसेलो छे; पण मात्र अध्यासने लईने तेम जणाय छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

मम स्वरूप है आतमा, जडशरीर तौ नांय ॥
विषयभोग को करत है, यह संशय मनमांय ॥१४०॥

शिष्य०:—हे गुरु! म्हारुं स्वरूप तो आत्मा छे. आ जड जे शरीरादि पदार्थो छे ते नथी; ए हवे पूर्णपणे समजी गयो; परंतु हजी एक संशय घणो ज मोटो छे. ते ए के, आत्मा जो निर्विकार छे तो आ विविध प्रकारना विषयोनो भोग कोण करे छे? केमके देहा-

दिक जड छे. तेमां सत्ता नथी, अने आ आत्मा के जेमां सत्ता छे, ते कर्ता-भोक्ता नथी.

गुरु०:—

विषयभोग व्यंजन रचे, थाली स्थूल शरीर ॥
इंद्रिय करसों करत है, भोजन बुद्धिहि धीर ॥१४१॥

गुरु०:—विषयभोगरूपी रसोई छे, स्थूल शरीररूपी थाळी छे, अने इंद्रियादि हाथ वडे आ मन-बुद्धि तेनो भोग करे छे.

इच्छा सुखदुख द्वेष अरु, धृति चिंतन संघात ॥
धर्मक्षेत्रहुंके सकल, आतम अलग रहात ॥ १४२ ॥
देह कहत है आपकों, जबलग वे था अज्ञ ॥
ब्रह्म लखे ज्ञानी वही, आतम अज्ञ न फज्ञ ॥१४३॥
तुं छूट्यो संसारतैं, निःसंदेह करि जान ॥
लख्यो आपकों आतमा, यहीं मुक्त मन मान ॥१४४॥

इच्छा, सुख, दुःख, राग, द्वेष, धीरज तथा चिंतन ए सघळा धर्मो शरीर-अंतःकरणादि क्षेत्रना छे. क्षेत्रज्ञ जे आत्मा, ते तो उक्त सर्व धर्मोथी अलग छे. ज्यांसुधी अज्ञानी हतो, त्यांसुधी पोताने देह मानतो हतो; परंतु ज्यारे गुरुप्रसादथी ब्रह्म—स्वस्वरूपनी ओळखाण थई, त्यारे स्पष्ट जणायुं के आ आत्मामां अज्ञान मात्र मिथ्यारूपे प्रतीत थतुं हतुं. 'आत्मा पोते ज्ञानस्वरूप ज छे, तेथी तेमां अज्ञता केम संभवे?' एवी दृढता करवाथी हे शिष्य तुं खरेखर आ संसारथी छूट्यो छे, ए संदेहरहित थईने तुंने कहुं छुं. पोताने आत्मा जाणवो ए ज मोक्ष छे; मोक्ष कांई बीजो पदार्थ नथी.

(कवित्त.)

सच्चिदानंदघन, स्वप्रकाश जाको रूप ॥
सबहिके बाहिर अरु, अंतर रहियतु है ॥
अचल अखंड अज, अक्रिये अनंत और ॥
अव्यय अरूप इंद्रिय, मन न गहियतु है ॥
निर्विकार निराधार, निर्विकल्प निराकार ॥
कूटवत निर्गुण, निरंतर लहियतु है ॥
आतमकौं ब्रह्म जानै, देहकौं अनित्य मानै ॥
पंडित शयाने ज्ञान, उन्हे कहियतु है ॥ १४५ ॥

सच्चिदानंद तथा स्वयंप्रकाश ए जेनां रूप छे, ते आत्मा आ अखिल विश्वनी अंदर तथा बहार सर्वत्र व्यापी रहेलो छे. वळी ते अचळ छे, अखंड छे, अज छे, अक्रिय छे, अनंत छे, अव्यय छे, अरूप छे; के जेथी मनादिक इंद्रियो तेनुं ग्रहण करी शकती नथी; निर्विकार छे, निराधार छे, निर्विकल्प छे, निराकार छे. (कूटनी पेठे) निर्गुण छे, अने निरंतर रहेवा वाळो-नित्य छे. आ आत्माने जे ब्रह्म जाणे.अने देहादिकने अनित्य माने, तेने पंडितजनो तथा विद्वान्पुरुषो **ज्ञान** कहे छे.

(दोहा.)

वरणाश्रम अभिमान है, ज्यौं लौं जियमैं जान ॥
वेदस्मृतिनकी शासना, त्यौं लौं सबैं प्रमान ॥ १४६ ॥

ज्यासुधी शरीरनी स्थिति छे, देहना सघळा व्यवहार चालु छे, प्राणनुं आवागमन थया करे छे, इंद्रियोमां भोग भोगववानी शक्ति

छे अने वर्ण तथा आश्रमनुं अभिमान छे, त्यांसुधी वेद तथा स्मृतिनी शिक्षाओ प्रमाणभूत छे; एटले के त्यांसुधी श्रुति-स्मृतिनी आज्ञाओनुं परिपालन करवुं ज जोईए.

(कवित्त.)

पाप अरु पून्य दोऊ, पटिया प्रबलहि जाकी ॥
लोक वेदरीत दोऊ, वासैनाकी बारीके ॥
काम क्रोध लोभ मोह, कीलनसों राख्यो जड ॥
कहे सुखदेव चक्र कर्मके कचारीके ॥
वरणाश्रम अभिमान, लोहकी जंजीर जान ॥
सुख और दुःखके, किमार तौर तारी के ॥
भ्रमकों निवारी रूप, अपनो संभारी सिंह ॥
निकज्यो प्रबोध जगपिंजराकों फारी के ॥ १४७ ॥

जे विश्वरूपी पिंजरांनां पाप तथा पुण्यरूपी नीचे–उपर बे मजबूत पाटियां छे, तेने लौकिक तथा अलौकिक आज्ञाओनी वासनारूपी बारी छे. काम, क्रोध तथा लोभरूपी खीलाओथी ते पिंजराने जडेलुं छे, अने कर्मरूपी जेने मोटां चक्रो छे, तेने पछाडी, भांगी भूका करी नाखीने तथा वर्णाश्रमनां अभिमानरूपी सांकळोने अने सुख तथा दुःखरूपी बारणांने तोडी नाखीने भ्रान्तिनुं निवारण करी, पोतानां स्वरूपने संभारी, आ प्रबोधरूपी सिंह, ए (जगत्‌रूपी) पिंजरांने फाडीने बहार नीकळयो!!

देह नांय इंद्रिय नांय, मन बुद्धि प्राण नांय ॥
कारण अविद्या नांय, और सुख जे कहै ॥

वर्ण और आश्रम नांय, जाति कुल धर्म नांय ॥
कर्त्ता और कर्म नांय, भोक्ता नांय ते कहे ॥
मायाको विलास नांय, ईशको प्रकाश नांय ॥
जीव चिदाभास नांय, औरहि विवेक है ॥
जाग्रत अरु स्वप्न नांय, सुषूपतको लखैयो॥
(सदा) तुर्याको प्रकट बोध रूप ब्रह्म एक है ॥ १४८ ॥

आ आत्मा देह नथी, इंद्रियो नथी, मन-बुद्धि-प्राण नथी, कारणशरीर अविद्या नथी, वर्ण नथी, आश्रम नथी, जाति नथी, कुळ नथी, धर्म नथी, कर्त्ता नथी, कर्म नथी, भोक्ता नथी, मायानो विलास नथी, ईश्वरनो प्रकाश नथी, अने जीव चिदाभास पण नथी. एनो विवेक तो सर्वथी न्यारो छे. जाग्रत तथा स्वप्न पण नथी. ए तो सुषुप्तिनो पण जाणवावाळो सदा तुर्यावस्थानो साक्षी एवो ज्ञानस्वरूप ब्रह्म ज छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

यह तो जान्यौ आतमा, तव प्रसादतें देव ॥
कहियें तत्वमसीएको, जो जानत हौं भेव ॥ १४९ ॥

शिष्य०:—हे गुरुदेव! आपनी कृपाये करीने ए आत्मानां यथार्थ स्वरूपनो बोध तो थयो, परंतु 'तत्त्वमसि' नो कांई भेद कृपा करीने कहो.

गुरु०:—

यह सब त्वंपद जीवको, तोहि सुनायो रूप ॥
अब सुन असिपदको अरथ, जो है सबको भूप ॥ १५० ॥

गुरु०:—हे पुत्र! प्रथम तुने 'तत्पद' जे 'ईश' तेनो बोध करेलो हतो अने हमणां 'त्वंपद' जे जीव, तेनो बोध कर्यो. हवे 'असिपद' नो यथार्थ अर्थ शुं छे ते सांभळ.

असिपदनुं वर्णन.

(दोहा.)

तत्पद ईश्वरको कहत, त्वंपद जीव बखान॥
असिपद ब्रह्म अलिप्त है, वह दो उनमें जान॥ १५१॥

ए त्रण पदोमांथी 'तत्' पद ए ईश्वरपद छे. 'त्वं' पद ए जीवनुं पद छे, अने 'असि' पद ए ब्रह्मनुं पद छे. 'तत्' तथा 'त्वं' ए बन्ने पदोनो समावेश 'असि' पदमां थाय छे.

वह ईश्वर सर्वज्ञ है, जीव सदा अलपज्ञ।
सम कहियै जो दुहुनकों, तौ न मानियैं अज्ञ॥१५२॥
तत्पद मानौ सिंधु है, त्वं पद बुंद समान॥
असिपद जल है दुहुनमैं, ताहि एक करि जान॥१५३॥
तत्पद जैसें भूप है, त्वं पद मनहु किसान॥
असिपद मानुष सो कहत, ऐसें जांन्यो जान॥१५४॥

ईश्वर सर्वज्ञ छे अने जीव ए अल्पज्ञ छे; ए बन्नेना सर्वज्ञत्व तथा अल्पज्ञत्व ए धर्मोनो परित्याग करीए तो चिद्रूस्वरूप बन्ने होवाथी बराबर छे. वस्तु मूळ तो एक छे, परंतु उपाधिना भेदने लईने ते भेदवाळी जणाय छे. जेमकेः—तत्पद ए समुद्र बराबर छे अने त्वंपद ए बुंद बराबर छे. परंतु जळरूप वडे करीने तो

बन्ने समान छे. ए समानपणुं **असिपदरूपी** जळवडे करीने छे. समुद्र जळ छे अने बुंद पण जळ छे; परंतु उपाधिना भेदने लीधे जेवी रीते भिन्न भिन्न जणाय छे, तेवी रीते जीव पण चैतन्यस्वरूप छे, अने ईश्वर पण चैतन्य स्वरूप छे; परंतु माया अने अविद्यानी उपाधिने लईने भिन्न भिन्न जणाय छे. मानो के **तत्पदरूपी** राजा छे अने **त्वंपदरूपी** खेडुत छे. ए बन्नेमां **असिपदरूपी** जे माणसपणुं ते तो समान छे. तेवी रीते जीव अने ईश्वर ए पण चिन्मयरूपवडे करीने समान छे. समृद्धिना भेदवडे करीने मानुषतामां तो भेद नथी छतां भेद देखाय छे, तेवी रीते जीव तथा ईश्वरमां गुणोनो मात्र भेद छे, स्वरूपमां भेद नथी.

शिष्य०:—

देवदत्त जिन नाम इक, मिल्यो विभौयुत क्यांय ॥
फिर वह देख्यो विपदयुत, सो चित आवत नांय॥१५५॥

शिष्य०:—देवदत्त नामना कोई एक पुरुषने प्रथम कोई स्थळे विभवयुक्त जोयो हतो, ने तेने ज वळी कोई स्थळे फरी विपद्युक्त जोयो, तो तेनी अवस्थामां स्पष्ट रीते भेद मालम पडे छे.

गुरु०:—

वही समयका तज विभव, अबकी तजो विपत्त ॥
दृष्टि करी जो देखियैं, तौ वही एक है सत्त ॥१५६॥

गुरु०:—तारुं कहेवुं ठीक छे, परंतु तेमां देवदत्तना स्वरूपनो तो कांई भेद जणातो नथी. प्रथमनो वैभव अने ते भूतकाळ, ते

तथा हालनी विपत अने आ वर्तमानकाळ, तेनो मात्र भेद पडे छे. ते बन्ने काळनी उपाधिओनो त्याग करीए छीए तो एवुं प्रत्यक्ष ज्ञान थाय छे के, **सोयं देवदत्तः** ॥ (ते ज आ देवदत्त छे.) एने 'जहदजहत् लक्षणा' कहे छे. वाक्यमां रहेलां पदनो मुख्य अर्थ ग्रहण करवामां प्रत्यक्षादि प्रमाणोनो अविरोध आवतो होय तो मुख्य अर्थनी साथे संबंध धरावनारा अन्य अर्थनो जे बोध करे तेने लक्षणा कहे छे. लक्षणावृत्ति त्रण प्रकारनी छेः जहत्, अजहत् अने जहदजहत्.

जहल्लक्षणावृत्तिः--**गंगायां घोषः** (गंगामां वाडो छे.) ए वाक्यमां गंगा शब्दनो मुख्य अर्थ जे जळप्रवाह, ते तजीने तेनासाथे नित्य संबंध धरावनार जे तीर, तेनाविषे जे गंगा शब्दनुं वर्त्तवुं ते **जहल्लक्षणा**. अजल्लक्षणाः—**श्रोणोधावति** (रातो दोडे छे.) ए वाक्यमां लालनुं दोडवुं, ए प्रत्यक्षादि प्रमाणोथी विरुद्ध छे, तेथी लाल शब्दनी लाल गुणवाळा घोडामां थती जे प्रवृत्ति, तेने **अजहल्लक्षणा** कहे छे. जहदजल्लक्षणाः—**सोयं देवदत्तः** (ते ज आ देवदत्त छे.) आ वाक्यमां **सः** तथा **अयं** एमां ते देश तथा ते काळ सहित देवदत्त एवो 'सः' पदनो अर्थ छे. अने आ देश तथा आ काळसहित देवदत्त एवो 'अयं' पदनो अर्थ छे. ए बन्ने पदनो साथे उच्चार करवाथी बेउनो एक ज अर्थ छे, एवुं समजाय छे, पण तेम संभवतुं नथी; केमके **'सः'** तथा **'अयं'** ए पदना वाच्यार्थमां विशेषण-

रूपे रहेला ते ते देश-काळादिनो परस्पर विरोध आवे छे. वास्ते तेमांथी ए बन्ने विरुद्धांसनो त्याग करी, मात्र देवदत्त पिंडमां ए बन्ने पदोनी लक्षणा करवी. आ लक्षणाने भागत्यागलक्षणा पण कहे छे

तेमांथी उक्त भागत्यागलक्षणा मानवाथी **तत्वमसि** ए महावाक्यमां **तत्** पदनो वाच्यार्थ जे सर्वज्ञतादिक धर्म, ते वाळो जे ईश्वर छे अने त्वंपदनो वाच्यार्थ जे अल्पज्ञतादि धर्म, ते वाळो जे जीव छे, ते बन्ने विरुद्ध धर्म वाळानी एकता संभवती नथी; परंतु ज्यारे सर्वज्ञत्व तथा अल्पज्ञत्वादिक विरुद्ध अंशोनो परित्याग करीए छीए ने केवळ चैतन्यांशमां ज ए बन्ने पदोनी लक्षणा करीए छीए, त्यारे विरुद्धांशनो त्याग थएथी शेष रहेलो जे अंश, तेमां लक्षणा करवाथी जीव तथा ईश्वरनी एकता संभवे छे.

ईश्वरकी सर्वज्ञता, सो मायासों जान ॥
जीवनकी अल्पज्ञता, ताहि अविद्या मान ॥ १५७॥
जैसी देहियां ईशकी, तैसी जीव बखान ॥
न्यारी न्यारी कहत है, दोनों एक प्रमान ॥ १५८ ॥
ते उपाधिको मूल है, ताकों जूठी जान ॥
शुद्ध बुद्धमय ब्रह्म है, एक आतमा मान ॥ १५९ ॥

ईश्वरनी सर्वज्ञता ए मायावडे करीने छे, तेवुं ज शरीर-जीवनुं छे. मात्र समष्टि-व्यष्टिना भेदथी करीने जुदुं जुदुं जणाय छे; वास्तविक तो बन्नेनां शरीरो बराबर छे. माया, अविद्या, सर्वज्ञत्व, अल्पज्ञत्व, समष्टि, व्यष्टि,—ए सघळां उपाधिनां मूळ छे. तेने लईने

भेदनी प्रतिती थाय छे. वळी ते सघळी उपाधि असत्य छे. ब्रह्म तो ए सर्व उपाधिथी रहित केवळ शुद्ध-चैतन्यस्वरूप छे.

तजो ईशकी ईशता, और जीव अविवेक ।।
तीनों पदकी एकता, तत्वमसि पद एक ॥ १६० ॥
तत्व तुंही है यह कह्यो, तत्वमसिनको अर्थ ।।
यह वृत्ति जाकी भई, सो सब भांति समर्थ ॥ १६१ ॥
सच्चिदानंद अद्वैत वे, अचल अखंड अनंत ।।
स्वप्रकाश कूटस्थ अज, अक्रिय ब्रह्म गनंत ॥ १६२ ॥

ईश्वरनी ईश्वरतानो अने जीवनी जीवतानो त्याग करो तो तत्, त्वं अने असि ए त्रणे पदनी एकता थाय छे.—'ते-तत्व ब्रह्म तुं ज छे,' एवो तत्वमसि महावाक्यनो अर्थ छे. एवी जेनी निश्चळ वृत्ति थाय छे, ते ब्रह्मस्वरूप होईने सर्व वाते समर्थ बने छे.

ते आत्मा १ सत्, २ चिद्, ३ आनंद, ४ अद्वैत, ५ अचळ, ६ अखंड, ७ अनंत, ८ स्वप्रकाश, ९ कूटस्थ, १० अज, ११ अक्रिय तथा १२ ब्रह्मस्वरूप छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

द्वादश एकहि ब्रह्मके, कहे विशेषण नाम
न्यारे न्यारे करि कहो, अब तिनके गुनग्राम ॥ १६३ ॥

शिष्य०:—हे गुरु! आपें ए ब्रह्मनां द्वादश विशेषणो गणाव्यां, परंतु तेनां खरां स्वरूप मारा ध्यानमां बेठां नथी, माटे कृपाकरी भिन्न भिन्न रीते तेना गुण तथा स्थानादिक विस्तारपूर्वक कहो.

सद्‌वर्णन.

गुरु०:—

(दोहा.)

असत् जगत् सतसों लगत, जाकी सत्ता पाय॥
सो सत ब्रह्मस्वरूप है, ज्ञानबिना न लखाय ॥ १६४ ॥

भूत, भविष्य तथा वर्तमान, ए त्रणे काळमां जेनो बाध न थाय ते सत्य कहेवाय छे. आ जगत् तेवुं नथी, केमके पूर्वकाळमां हतुं तेवुं वर्तमानकाळमां नथी अने वर्तमानमां छे तेवुं नित्य रहेनार नथी; क्षणपरिणामी होवाथी. जे जे पदार्थो क्षणपरिणामी होय छे, ते ते नित्य नथी; जेमके घट. घट जेम क्षणपरिणामी होवाथी नित्य नथी, तेम जगत् पण क्षणपरिणामी होवाथी नित्य नथी. परंतु जेनी सत्ताने पामीने असत् छतां सत्‌सरखुं भासे छे, ते एक ब्रह्म ज मात्र सत् छे. तेनुं खरुं स्वरूप ज्ञान थया विना जाणवामां आवे तेवुं नथी.

(कवित्त.)

जाग्रत रु स्वप्न जाकी, चेतनासें होत सब ॥
सुषुप्तिमैं वही साक्षी एकसो विशेखिए ॥
तीनहीं अवस्थाओंको भावाभाव भावेरूप ॥
तूरिया स्वरूप एक-रस अवरेखिए ॥
जैसें लोह चुंबक, समीप करे चेष्टा जड ॥
तैसें देह इंद्रिय मन आतमसों लेखिए ॥
एकरूपें जगमैं जगमगती जोत जाकी जहां ॥
तहां तहां एक चिद चेतनसों देखिए ॥ १६५ ॥

जेनी चेतनावडे जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति आदि अवस्थाओ थाय छे, तथा सर्व अवस्थामां जे साक्षीरूपे रहेलो छे, तेम ज पोते एक छतां त्रणे अवस्थानां भाव, अभाव अने स्वरूपने जाणे छे, तथा ए तुर्यस्वरूपी चैतन्यमय आत्मा, सर्वत्र एकरस व्यापेलो छे. जेवी-रीते चुंबकना समीप लोह चेष्टा करे छे, तेवी रीते एनी ज चेतना-वडे इंद्रियादिक जड पदार्थो चेष्टावाळा थाय छे. आ जगत्मां ज्यां जोईए त्यां एक चैतन्यस्वरूपनी ज ज्योति झळहळी रही छे.

आनंदस्वरूपवर्णन.

(कवित्त.)

देखे सुने सुंघे गावै, चंदन त्वचाकों लावे ॥
वचन बनावे नीको, जाही जाकों लगतु है ॥
पाणीसों ग्रहण करे, पांवमसों पंथ चले ॥
जोई धरे हियमैं सोई, सुखमैंहि पगतु है ॥
कहे सुखदेव विषैं मिले मन भावते तौ ॥
सुख सोई लगत पाछे मनसैंहि भगतु है ॥
आनंद स्वरूप ब्रह्मआनंद अखंड जान ॥
सुपनेके आनंदतैं आनंदहि जगतु है ॥ १६६ ॥

जोय छे, सांभळे छे, सुंघे छे, शरीरपर स्रक् चंदनादिक लगावे छे, हाथोथी ग्रहण करे छे, पगोवडे चाले छे, तथा वातोने मनमां स्मरण तरांके संघरे छे. ए सघळुं आनंदने माटे ज करे छे. मनमानता विषयभोग मळे तो ते सुखरूप जणाय छे, परंतु ते निरंतर रहेता नथी. 'ए विषयनो नाश थाय,' एवी आपणनी इच्छा न छतां पण ते सुखोने

तथा तेना आनंदने जतां रहेतां जोईए छीए. केम के विषयसुखो ए क्षणिक छे. वास्ते जो अखंड सुखनी इच्छा होय तो ब्रह्म के जे आनंदस्वरूप छे तेनो अनुभव कर. केम के खरो आनंद तेमां ज रहेलो छे. जो के निद्रामां पण आनंद छे, परंतु ते आनंद आवरण-युक्त होवाथी स्वरूपनां ज्ञानपूर्वक अनुभवात्मक आनंद निद्राने-विषे थतो नथी. परंतु आवरणथी रहित एवी महानिद्रा जे समाधि, तेमां ज ए आनंद, स्वरूपनां ज्ञानसाथे अनुभवात्मक उपजे छे.

अद्वैतवर्णन.

(दोहा.)

एकहि सबमैं वसत है, स्थावर जंगम देह ॥
जैसें गनिका मालके, सूतमांहि लखि लेह ॥१६७॥

स्थावर जंगम देहो तथा पदार्थमात्रमां ए एकज सूत्रात्मा वास करीने रहेलो छे. जेवी रीते माळाओना पारा एक ज सूत्रमां गोटवाएला छे, तेवी रीते आ विचित्र विश्व, ए सूत्रात्मानेविषे गोठवाएलुं छे.

अचलवर्णन.

(दोहा.)

देह होत अरु मिटत है, तातैं चंचल जान ॥
जन्म मृत्यु जाको नहि, (सो) आतम अचल प्रमान ॥१६८॥

जे पदार्थो निरंतर पोतानी एक ज स्थितिमां रहेता नथी, पण अवस्थांतरने पामे छे, ते पदार्थो चळ कहेवाय छे. देह पण तेवो ज

पदार्थ छे; केमके ते अनेक अवस्थांतरोने भोगवतो आपणे अनुभ-वीए छीए. परंतु आत्मा निरंतर पोतानी एक ज स्थितिमां रहेवा-वाळो छे. कोईकाळे ते अवस्थांतरने पामतो नथी तेथी अचळ कहेवाय छे.

अखंडवर्णन.

(सवैया.)

नां जिनकेहि सजाति कहुं, तब दूसर जातिकों कौन गिनावे ॥
आपहि मांय न भेद कछु श्रुति, नासिका पान न पाय न धावै ॥
इन रूप न रंगहि वेद कहे, मन इंद्रिय देह कर क्यों तिहि पावै ॥
यहु चेतन एक अखंड स्वरूप, कहे सुख आपकों आप लखावै १६९

आत्मा देश, काळ तथा जातिवडे परिच्छिन्न नथी, तेथी अखंड छे. वळी तेमां सजातीय, विजातीय अने स्वगतादि भेदो जेम नथी, तेम ज तेनाविषे अंगांगी भाव पण नथी. कान, नाक, मुख, हाथ, पग, ए अंगो जेनेविषे होय ते अंगी कहेवाय छे. आत्मा निराकार तथा निरवयव होवाथी, तेनाविषे अंगांगी भाव संभवतो नथी. वळी तेनामां कोई प्रकारनो रंग नथी, तेम रूप पण नथी. रूप-रंग विशिष्ठ न होवाथी, मनादिक ईंद्रियो तथा करचरणादि-युक्त देह, कोईपण रीते तेने पामी शके एम नथी. ए तो केवळ चिन्मय, अखंड तथा आनंदस्वरूप छे अने ते पोताने पोतावडे करीने ज जणाय छे.

अनंतवर्णन.

(कवित्त.)

प्रथमहि मायामैं प्रवेश किय व्योम वायु ॥
तेज नीर अवनीमैं व्यापक गनंत है ॥
थिरचर जिनु जीव (जेते) जगमते जगतमांय ॥
सबहीमैं प्रकट एक चेतन्न अनंत है ॥
जैसें घट मठमांय व्यापक अकाश एक ॥
तैसें सुखदेव जान वही या अनंत है ॥
रूप है अनंत जाकी महिमा अनंत और ॥
आदि है न अंत ऐसो आतम अनंत है ॥ १७० ॥

आ आत्माए प्रथम मायानेविषे प्रवेश कर्यो ने त्यां मायारूपे थई रह्यो. त्यारपछी आकाश, वायु, तेज, जळ ने पृथ्वीनेविषे व्यापकताथी रह्यो; अने त्यारपछी स्थावर-जंगम प्राणीमात्रने विषे व्यापक थई सर्वमां चैतन्यरूपे तेणे प्रकाश कर्यो. जेवी रीते घटमां घटाकाशरूपे तथा मठमां मटाकाशरूपे रही, एक ज आकाश व्यापी रहे छे, तेवी रीते आत्मा पण सर्वत्र व्यापी रहेलो छे, तेथी ए (आत्मा) अनंत छे. वळी तेनां रूप पण अनंत छे, महिमाए अनंत छे अने पोते पण आदि-अंतथी रहित होई अनंतरूप ज छे.

स्वप्रकाशवर्णन.

(कवित्त.)

और वस्तु चाहियें तौ दीपक प्रकाश करे ॥
दीपकके चाहिवेकों दीपक न चाहिए ॥

और सब देखिवेको आंखि सुखदेव कहे ॥
आंखेनको देखिवेको काको अवगा.ि ५ ॥
सूर्यको प्रकाश पाय सबको प्रकाश होत ॥
सूर्यको प्रकाश जैसें स्वतः सहराईए ॥
अग्निमांय दाह रु प्रकाश जैसें आपहितैं ॥
तैसें स्वप्रकाश एक आतमसों आहिए ॥ १७१ ॥

बीजी वस्तुने देखाडवामाटे दीवानी जरूर पडे छे, पण दीवाने देखाडवामाटे कांई दीवो जोईतो नथी; तेम ज अन्य वस्तु जोवाने आंखनी जरूर पडे छे, पण आंखने (अन्य पदार्थो) जोवामाटे कांई बीजी आंखोनी जरूर पडती नथी. वळी सूर्यनो प्रकाश पामीने सघळी वस्तुओ प्रकाशे छे, पण सूर्यनो प्रकाश करवाने कोई अन्य वस्तुनी जरूर पडती नथी. अग्निमां जे रीते दाह अने प्रकाश पोताथी ज रहेलां छे, ते रीति आत्मानेविषे प्रकाश स्वतःसिद्ध रहेलो छे; अर्थात् आत्मा स्वयंप्रकाश छे.

कूटस्थवर्णन.

(दोहा.)

जाके नहिं विकार कछु, रहे कूटवत् नित्य ॥
सो कूटस्थ कहावही, समुझि देख अब चित्त ॥१७२॥

कूटोऽयोघनवत् निश्चलं यथास्यात्तथा तिष्ठतीति कूटस्थः ॥

लोढानी एरणनी पेठे जे नित्य निर्विकार तथा निश्चल रहे ते कूटस्थ कहेवाय छे. आ स्थूळ-सूक्ष्म शरीरयुक्त चिदाभासरूप भ्रमनुं

जे अधिष्ठान चैतन्य ते कूटस्थ कहेल छे. ए कूटस्थ असंग ज छे. तेनाविषे जन्मादिक विकारो नथी, तेनो नाश नथी, उत्पत्ति नथी, बद्ध नथी, सिद्ध नथी, साधक नथी, मुमुक्षु नथी तथा मुक्त पण नथी. वाणी तथा मनथी सदा अगम्य छे अने सर्व विकारोथी रहित होई, केवळ चैतन्यघन स्वरूप छे.

अक्रियवर्णन.

(दोहा.)

आत्मा तौ अक्रिय सदा, देह क्रिया बहु रूप ॥
जैसें दीप प्रकाशतैं, खेले ज्वारी जूप ॥ १७३ ॥
विषय बुद्धि पातर नचे, अहंकार ढिग भूप ॥
इंद्रिय ताल मृदुंगयुत, आतम दीपक रूप ॥ १७४ ॥

आत्मा सर्व क्रियाओथी रहित अक्रिय छे, अने देहादिक पदार्थो विविध प्रकारनी क्रियावाळा छे; परंतु ते क्रिया आत्मानी सत्ताविना देहादिनेविषे नथी. जेवी रीते दिवापासे बेसी जुगारीओ जुगार खेले छे, त्यारे दीवो मात्र प्रकाश आपे छे; रमत साथे तेने कांई संबंध नथी. तेवी रीते आत्मा, देहादिकोने सत्ता मात्र आपे छे, परंतु तेनी क्रियासाथे तेने कांई संबंध नथी. आ अज्ञानरूपी अंधकारमां आत्मारूपी दीप प्रकाशी रह्यो छे, ने तेना समीप अहंकाररूपी राजापासे, विषयरूपी भूमि उपर, ईंद्रियरूपी ताल-मृदंगयुक्त बुद्धिरूपी वेश्या नाच करी रही छे. तेमां सहु कोई क्रियावाळां छे,

पण आत्मारूपी दीपक तो मात्र प्रकाश ज आपे छे, तेने कोई कि-यासाथे कांई ज संबंध नथी.

ब्रह्मवर्णन.

(कवित्त.)

शेषके सहस्त्र मुख जीभ द्वे सहस्त्र जासों ॥
नये नये नाम नित लेत रहियतु है ॥
एक ज्युं ब्रह्मडंहिको पावत न पार कोऊ ॥
ऐसें कोट कोट रोम रोम लहियतु है ॥
नेति नेति वेद कहे भेद न लहत जाको ॥
ताको गुणरूप कहो कैसें चहियतु है ॥
सतचिदआनंदरूप अविनाशी अज अनूप ॥
प्रकट्यो परिपूर्ण ब्रह्म ताकों कहियतु है ॥१७५॥

श्री शेषभगवान् पोतानां बे हजार जीभवाळां सहस्त्र मुखथी नित्य नवां नवां नाम लीधा करे, तो पण एक ब्रह्मांडना पारने पामी शके तेम नथी. त्यारे एवां जे कोटि कोटि ब्रह्मांड जेना रोम रोममां रहेला छे, एवा आत्मानो पार कोण पामी शके तेम छे? कोई ज नहि. केमके वेद पण कही कहीने थाकी गया अने 'नेति, नेति' (इति न) 'एटलाथी ज छेडो नथी' एम कहे छे ने एना खरा भेदनुं ग्रहण करी शकता नथी, त्यारे तेना गुण अने रूपने जाणवानी इच्छा करीए तो ते केम बनी शके? न ज बने. सत्‌रूप, चिद्रूप, आनंदरूप, अविनाशी, अजन्मा, जेने कोईनी उपमा आपी न

शकाय एवुं, परिपूर्ण अने सर्वत्र प्रकाशी रहेल एवुं जे तत्व छे, तेने ब्रह्म कहे छे.

(दोहा.)

ए द्वादश बिस्तारसें, कहे विशेषण चारु ॥
ऐसें जानौं आपकों, यही वेदको सार ॥१७६॥

ए प्रमाणे ए बारे विशेषणो विस्तारपूर्वक कह्यां. ते विशेषण-युक्त जे ब्रह्म, ते हुं छुं; एम जे जाणवुं ते ज वेदांतनो सार छे.

शिष्य०:—

न्यारे न्यारे सब लखे, घल विक्रम अरु नाम ॥
रूप कौन है ब्रह्मको, लहों ज्ञानके धाम ॥ १७७ ॥

शिष्य०:—हे गुरु! ए तो आपे जुदां जुदां करीने ए विशेषणो कह्यां, पण ब्रह्मनुं खरुं स्वरूप शुं छे, ते कृपा करीने कहो, के जेथी ज्ञाननुं पद मळे.

गुरु०:—

अप्रमाण अद्वैत है, अरु चैतन्य सुभाय ॥
मन इंद्रिय गहि नां शके, कैसें बरन्यो जाय ॥१७८॥

गुरु:०—आत्मा प्रत्यक्षादि प्रमाणो वडे करीने अनुभवमां आवी शकतो नथी. वळी आत्मतत्वने विषे कोई पण रीते जीव, ईश्वर, माया, जड, चेतन तथा विश्वादिक भेद नथी; जे कांई भेद जणाय छे ते सघळा नाम मात्र होई कल्पित, मिथ्या, वंध्यासुतवत्, शशशृंगवत्, मृगतृष्णावत् तथा आकाशकुसुमवत् छे. वास्तविक रीते,

कांई नहि छतां केवळ भ्रान्तिवडे अधिष्ठानने विषे जणाय छे. जे कांई जणाय छे, ते ब्रह्मनुं विवर्त ज छे. जेवी रीते भ्रांतिथी रज्जु, सर्परूपे भासीने भीतिनो हेतु थई पडे छे, तेवी रीते ब्रह्म जगतरूपे भासी, बंधादिकनो हेतु थई पडे छे. परंतु ते जेम रज्जुरूप ज छे, तेम ब्रह्म जगतरूपे भासे छे, परंतु ब्रह्मरूप ज छे. सर्परूपे जणातां छतां पण जेम रज्जुत्वनो भ्रंश थतो नथी, तेम जगत्‌रूपे जणातां छतां पण ब्रह्मत्वनो भ्रंश थतो नथी. दोरडीना ज्ञानथी जेवी रीते सर्पनी भ्रांति टळी जाय छे, तेवी रीते अधिष्ठान चैतन्यब्रह्मनुं ज्ञान थवाथी सर्व प्रपंच-भेद टळी जाय छे, माटे ते अद्वैत छे. वळी मन तथा इंद्रियो वडे करीने पण ते जाणी शकाय तेम नथी. तेम वाणीनो पण ते विषय नथी, त्यारे हे शिष्य! तेनुं वर्णन शी रीते थई शके?

(कवित्त.)

काननको नाद नांय जीभको सवाद नांय ॥
बचननको वाद नांय जूगतीसों जो कहै ॥
नैनको दिखाव नांय नाकको सुंघाव नांय ॥
करको गहाव नांय पावनकी रोक है ॥
मन करी जान्यो नांय दूसरो प्रमान्यो नांय ॥
बुद्धि अनुमान्यो नांय प्रकट कर जो कहै ॥
असत प्रपंच सत्य कैसें पहिचाने आप ॥
आप सुख जाने दूजो माने बिन को कहै ॥ १७९ ॥

(दोहा.)

एक ब्रह्म अद्वैत है, ताकी उपमा कौन ॥
बिन उपमा समझे नहिं, अब कहावे तौन ॥ १८० ॥

जो लक्षण आकाशको, सोहि ब्रह्मको जान ॥
वो जड वे चैतन्य है, यही भेद हिय आन ॥ १८१ ॥

ए आत्मा, काननो शब्द नथी, जीभनो स्वाद नथी, अथवा वचननो वाद नथी के कोई पण रीते कही शकाय! तेम ज आंखे देखाय तेवो नथी, नाके सुंघाय तेवो नथी, हाथे लई शकाय तेवो नथी, पगनी पण त्यां गति नथी, तेथा मन वडे जाणी शकाय तेवो पण नथी. आम छे त्यारे ते असत्यरूप छे, सत्यरूप छे, के प्रपंचरूप छे, तेने केवी रीते समजी शकशो? केमके ते तो पोताने पोताथी ज जणाय तेम छे—अनुभवगम्य छे, तेथी अनुभव थया विना बीजो कोई व्यक्ति 'ए आत्मा छे' एम केम माने? एक ब्रह्म ज्यारे एक अद्वैत ज छे, त्यारे तेने बीजानो अभाव होवाथी कोनी उपमा आपी शकाय? वळी अज्ञानी जनो उपमा विना समजी शकता नथी, ए पण मोटी विडंबणा छे; तथापि स्थूळ दृष्टांतवडे कहुं छुं ते सांभळः—

जे लक्षण आकाशनुं छे, ते ज लक्षण तारे ए ब्रह्मतत्वनुं समजवुं; बेउमां फेरमात्र एटलो ज छे के आकाश जड छे अने ब्रह्म चैतन्य छे.

(कवित्त.)

व्योमहीमैं सातहु रसातल रु सात लोक ॥
व्योमहीके मांय लोकालोक देखियतु है ॥
व्योमहीमैं विश्व और, विश्वहीमैं व्योम जैसें ॥
घट मठके मांय अरु, न्यारो लिखियतु है ॥
कहे सुखदेव जैसें, जीव ईश भेद वामैं ॥

घट मठको भेद तैसें, यामैं पेखियतु है ॥
और सर्व लक्षण समान जान व्योमहीके ॥
ब्रह्ममांय चेतनता औ, विशेषियतु है ॥ १८२ ॥

जेवी रीते एक ज आकाशमां सात पाताळ, सात लोको तथा लोकालोक रह्या छे, तथा आकाशमां विश्व अने विश्वमां आकाश ओतप्रोत थईने रह्या छतां घटमां, घटरूप उपाधिथी घटरूपे अने मठमां मठरूप उपाधिथी मठरूपे अलग अलग जणाय छे, तेवी ज रीते एक ज ब्रह्मतत्वने विषे घट तथा मठनी पेठे जीव तथा ईश्वररूप उपाधिने लईने अलग अलगपणुं जणाय छे. वास्तविक आकाश जेम एक होई सर्वत्र व्यापी रहेल छे, तेवी ज रीते ए ब्रह्मतत्व पण एक ज होई सर्वत्र व्यापी रहेल छे. ब्रह्मनां सर्व लक्षणो आकाशना जेवां छे, परंतु मात्र एक चेतनता आकाश करतां तेमां विशेषरूपे रहेली छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

कह्यो प्रपंच असत्य अरु, सत्य ब्रह्म सो एक ॥
दूजो भयो असत्य क्यौं, रहे एककी टेक ॥ १८३ ॥

शिष्य०:–हे गुरुदेव! आपे प्रपंचने असत्य कह्यो ने एक ज ब्रह्मने सत्य कह्युं, तो ते प्रपंच तथा ब्रह्म एम बे थयां; त्यारे हवे एकपणुं–अद्वैतपणुं केम करीने रह्युं? ए तो अद्वैतनेविषे द्वैतापति आवे छे.

गुरु०:—

एकहि केवल ब्रह्म है, भेद प्रपंच न जान ॥
नित्यानित्य विवेकतैं, दूर करत अज्ञान ॥ १८४ ॥

कह्यो जिनैं पहिले प्रथम, देह आतमा एक ॥
सो जाने नहि तत्वकों, मानो मूरख छेक ॥ १८५ ॥
देह भिन्न करि आतमसों, देहि ममत्व छुडाय ॥
भयो आतमा आप जब, तब सब एकहि भाय ॥ १८६ ॥

गुरु०:—केवळ एक ब्रह्म ज छे, प्रपंच कांई नथी. प्रपंच ए मिथ्या तथा अनित्य छे अने ब्रह्म सत्य तथा नित्य छे, माटे नित्यानित्यना विवेक वडे करीने अज्ञानने दूर कर. जे मूर्ख मतवादिओ देहने ज आत्मा माने छे, तेओ तत्वने कांई ज समजता नथी. वास्ते तुं देहने आत्मा नहि मानतां तेमांथी ममत्वने तजी दे. अने देह ए अनात्म, अनित्य तथा जड छे, एवुं ज्यारे निश्चयपूर्वक समजी शकीश त्यारे तुं देहथी भिन्न, नित्य, सत्य अने एक एवो आत्मा थयो ज छे; अने त्यारे सर्वत्र एक ज व्यापक थईने तुं ज रहेलो छे एम समजीश.

(छंद अरिल.)

एकमेव अद्वैत, ब्रह्म निर्वेद है ॥
और वस्तु कछु नांय, भेद अनभेद है ॥
यह अद्वय सिद्धांत, बात वह दृढ गहैं ॥
जानि आपकों आप, मोक्षपदकों लहै ॥ १८७ ॥

(दोहा.)

जगको कारन ब्रह्म है, यह निश्चय करि जोय ॥
भूल न मनमैं लाईए, कारन कारज दोय ॥ १८८ ॥

ए परब्रह्म एक ज होवाथी अद्वैत कहेवाय छे, अने मन-बुद्धि

आदिक इंद्रियो वडे करीने जाणी शकाय तेम नथी. वळी ते भेदाभेदथी रहित छे; कारण के ते सिवाय बीजी कोई ज वस्तु नथी. एवो अद्वैत मतनो सिद्ध सिद्धांत छे. ते सिद्धांतने पूर्णपणे समजीने जे अंतरमां श्रद्धापूर्वक दृढावे छे, ते ज पोतानां आत्मस्वरूपने जाणी मोक्षपदने पामे छे.

वळी आ संपूर्ण जगत्नुं मूळ कारण ब्रह्म ज छे, एम पोतानां अंतःकरणमां निश्चय करवो; परंतु भूलथी मनमां कदी एम न लाववुं के ए कार्य-जगत् तथा कारण—ब्रह्म ए बन्ने भिन्न भिन्न छे.

शिष्य०:—

कारन तौ द्वै भांति है, उपादान रु निमित्त ॥
कहिये तामैं कोन है, यह अविनाशी नित्त ॥ १८९ ॥

शिष्य०:—हे गुरु! ब्रह्मने ज्यारे आप जगत्नुं कारण बतावो छो, त्यारे ए ब्रह्म जगत्नुं केवुं कारण छे? केमके कारण बे प्रकारनां छेः—निमित्त तथा उपादान. तो तेमांथी ब्रह्म ए जगतनुं उपादानकारण छे के निमित्तकारण छे, ते कृपा करीने कहो.

गुरु:०—

कारन एकहि ब्रह्मको, दुहूं भांतिन कर जान ॥
उपादान अब कहत हौं, फिर कहुं निमित बखान ॥१९०॥

गुरु०:—ब्रह्म ए जगत्नुं अभिन्ननिमित्तोपादान कारण छे. तेमांथी प्रथम तने उपादाननो भेद समजावुं छुं.

(कवित्त.)

मार्टीसों कहत घट, कार्टीसों कहत मठ ॥
सूतहीसों कहत पट, पीटपाट आनेतें ॥
लोहसों कटारी कहे, पीतरसों झारी कहै ॥
कांसेसोंहि थारी कहे भोजनके सानेतें ॥
कहे सुखदेव जैसें, जलसों तरंग कहै ॥
तुंग कहे तांबेमांय, रंग लपटानेतें ॥
कनकसों कंकन कड़ा, कांटा कै कहात जैसें ॥
ब्रह्महिसों जगत कहे, आप विन जानेतै ॥ १९१ ॥

माटीथी घडो उत्पन्न थाय छे, माटे माटी ए घडानुं उपादान कारण कहेवाय छे. तेवी ज रीते काष्टादिक पदार्थो मठनां उपादान कारण छे. लोह, कटारी आदिकनुं उपादानकारण छे. वळी वस्त्रोनुं तंतु, वासणोनुं धातु तथा तरंगोनुं जळ उपादान कारण जाणवुं; तथा जेवी रीते कंगन, कांटा, कडां, ए आदिक आभूषणोनुं सोनुं उपादान कारण छे, तेवी रीते ब्रह्म ए जगत्नुं उपादानकारण जाणवुं. जे कार्य जेनाथी उत्पन्न थाय, ते तेनुं उपादानकारण कहेवाय छे, परंतु अमारा मत प्रमाणे तो जगत् जो उत्पन्न ज थयुं नथी, तो तेनुं उपादानकारण पण ब्रह्मने केम कही शकाय? मात्र एम कहेवुं ए तो पोतानां-आत्मानां ज्ञान विनानुं कहेवा मात्र छे.

गंधर्वको नग्र जैसें, वादरमें देखियत ॥
नभनीलतासों सुनो, खाली कोहि भर्म है ॥
जैसें शुष्क ठोंठ आगे, नरके सम निशी लागे ॥
जेवरीमें सर्पको, अंधेरेमांय भर्म है ॥

कहे सुखदेव जैसें, स्फाटिककों मनी जाने ॥
लालकों अंगार माने, जाने वही गर्म है ॥
रूपो सीप श्वेतनमैं, नीर लख्यो रेतनमैं ॥
ऐसें ब्रह्म चेतनमैं, जान विश्व भर्म है ॥ १९२ ॥

खरेखरी रीते तो आकाशमां जेवी रीते गंधर्वनगर तथा नीलता नहि छतां भ्रांतिथी भासे छे; झाडनां सूकां ठुंठामां रात्रिये पुरुष नहि छतां भ्रांतिथी जणाय छे; दोरडीमां सर्प, स्फाटिकमां मणीपणुं, लालमां वह्निपणुं, छीपमां रूपुं, तथा मरुभूमिमां-रेताळदेशमानी रेतिमां भ्रांतिथी जेम जळनो भास थाय छे, तेम आ परब्रह्मनेविषे जगत् नहि छतां मात्र भ्रांतिथी ज भासे छे.

चश्मेके दियेसें जैसें, छोटोउ बडोसो लागे ॥
दूसरो निहारे बडो, छोटो सोई लगतु है ॥
कांचहीकी धरनीमांय नीर सम भास परे ॥
नीरमांय कहूं कहूं, कांच जैसो जगतु है ॥
नैयाके चलेसें तीर, तरुवरहि चलित लागे ॥
बादरेके दौरें मानौं, चंद्रमाहि भगतु है ॥
जैसें इंद्रजाल वारे, पांखतें पंखेरु आंखे ॥
तैसें ब्रह्म चेतनमांय, भासत हे जगतु है ॥ १९३ ॥

अंतर्गोळ उपनेत्र—चश्मां लगाड्याथी नानो पदार्थ भ्रांतिथी मोटो देखाय छे, बहिर्गोळ उपनेत्र—चश्मां लगाड्याथी मोटो पदार्थ पण भ्रांतिथी नानो देखाय छे, बिल्लोलनी* पृथ्वीमां जळ भ्रांतिथी भासे

---

* ए ज भ्रांतिथी दुर्योधनने पोतानां वस्त्रो उंचां लेवां पड्यां हतां. अने तेथी ज 'अंधानो पुत्र अंध ज होय नां ?' एवुं वचन सांभळवुं पडयुं हतुं.

छे, नाव—वहाणना चालवाथी किनारापरनां वृक्षादिक भ्रांतिथी चालतां जणाय छे, वादळांना दोडवाथी चंद्रनुं चलन भ्रांतिथी भासे छे तथा जेवी रीते पांखनुं पक्षी (इंद्रजाळथी) भ्रांतिथी देखाय छे, तेवी ज रीते ब्रह्म चेतनने विषे, जगत्‌मां भ्रांतिथी जणाय छे.

शिष्य०:—

(दोहा.)

ब्रह्म नित्य चैतन्य है, जग अनित्य जड जान ॥
उपादान कैसें भयो, जडको चेतन आन ॥ १९४ ॥

शिष्य०:—हे गुरु! आपे ब्रह्मने जगत्‌नुं उपादानकारण कह्युं, पण ते बनी शकतुं नथी; केम के ब्रह्म ए नित्य तथा चिद्रूप छे अने जगत् अनित्य तथा जडरूप छे. हवे चैतन्य ब्रह्मथी जड जगत्‌नी उत्पत्ति केम संभवे?

गुरु०:—

(दोहा.)

जडसौं चिद् तोसौं कह्यो, अब चिद्‌सौं जड देख ॥
जीवितसैं निर्जिव नखुन, उपजत निज कर पेख ॥ १९५ ॥

गुरुः—हे पुत्र! जडपदार्थमांथी चैतन्य उत्पन्न थाय छे अने चैतन्यमांथी जडपदार्थ उत्पन्न थाय छे. एमां जडथी चेतननुं दृष्टान्त तो तने प्रथम कहेवामां आव्युं. हवे चेतनथी जडनुं दृष्टांत तारे दूर देखवुं पडे तेम नथी; कारण के ते तो तारा शरीरमां ज छे. जो तारो पोतानो ज हाथ; तेमां चिन्मय-जीवित नखमांथी जडमय-नि-

जीव नख उत्पन्न थाय छे. आ विश्वनी लीला अपार छे. चेतनमांथी जड ने जडमांथी चेतननो उद्भव थवो ए कांई साधारण वात छे? कदी नहि. परंतु यथार्थ जोवा जशो तो सामान्यभावथी एक सच्चिदानंद स्वरूप परमात्मानी ज सत्ता सर्वत्र व्यापी रही छे ने ते **कर्त्तुम कर्त्तुमन्यथाकर्त्तुमपिशक्यते.**

गुरु*०:—

चेतनतैं जड होत है, जडतैं चेतन होइ ॥
गोवर जडतैं होत है, गुबरीला चिद सोइ ॥ १९६ ॥

गुरु०:—एम तो नहि कहेवुं जोइये, केमके एवो कांई खास नियम ज नथी के चेतनथी जड न थाय तथा जड़थी चेतन न थाय. जुओ के गोबर ए जड छे, छतां तेमां चैतन्यरूपी कीडा उत्पन्न थाय छे. तेवी ज रीते ब्रह्म ए चैतन्य छतां तेमांथी जड एक जगत् उत्पन्न थाय तो ते असंभवित नथी. माटे ब्रह्म ए जगत्नुं उपादानकारण छे, एम कहेवामां कांई ज अडचण नथी.

शिष्यः०—

(दोहा.)

यह तो जानी जो कही, उपादानकी रीत ॥
अब मिमित्त किन भांति है, सो कहीए कर प्रीत ॥१९७॥

शिष्य०:—हे गुरु! आपे जे उपादाननी प्रक्रिया कही ते तो

---

* आ वचन विवेचनसहित दोहा अंक १९५ ने स्थळे अने १९५ नुं वचन १९६ ने स्थळे छापवुं जोईए, परंतु भूलथी तेम थयुं नथी.

सघळी समजाई. हवे ब्रह्म ए जगतनुं निमित्तकारण शी रीते थई शके छे ते कहो; केमके उपादान ए निमित्त थई शकतुं नथी.

गुरु०:—

वेद स्मृतिनकी शाखकों, धरे ग्रंथ पढि जाय ॥
तातें उपमा जगतसों, प्रकट देत समुझाय ॥ १९८॥

गुरु०:—हे पुत्र! तारी शंका बराबर छे. उपादान ए कोईपण काळे निमित्त थई शकतुं नथी, परंतु वेदश्रुति तथा स्मृति एम स्पष्ट कहे छे, तेथी ब्रह्मने जगतनुं निमित्त तेम ज उपादान-कारण मानवुं पडे छे.

(कवित्त.)

जैसें घटकारजके कारन कहात दोऊ ॥
उपादान माटी अरु निमित कुंभार है ॥
ऐसें पांच भूत तीन गुनसेंहि विश्व भयो ॥
आपे आप जीव ईश आप करतार है ॥
माटी कुंभकार न्यारे एक कहे शोच लागे ॥
तातें और उपमा देत कहीं निरधार है ॥
जारे को निमित्त उपादान जैसें मकरी रहै ॥
वही रीत विश्व और ब्रह्मको विचार है ॥ १९९ ॥

जेवी रीते घटरूपी कार्यनां उपादान तथा निमित्त एवां बे कारण कहेवाय छे, तेमां माटी ए घडानुं उपादानकारण छे अने कुंभार (चक्र, दंडादि सह) निमित्तकारण छे. एवी रीते त्रण गुण तथा पांच भूतादिक रूपे ब्रह्म जगतनुं उपादान कारण छे अने जीव तथा ईश्वररूपे ब्रह्म जगतनुं निमित्त कारण छे. जुदां जुदां

जे माटी तथा कुंभार-उपादान तथा निमित्त, तेने एक कहेवां ए आश्चर्यनी वात छे, परंतु ते कांई असंभवित नथी. जेवी रीते जाळांनुं उपादान तथा निमित्तकारण करोळीओ छे, तेवी ज रीते ब्रह्म ए जगत्नुं उपादान तथा निमित्तकारण छे.

(दोहा.)

कारज कारण कर कह्यो, तो सौं यह व्यवहार ॥
कारज कारणके परे, सोहत तत्व विचार ॥ २०० ॥

कोण कोनुं कार्य तथा कोण कोनुं कारण छे, तेनो सघळो निर्णय तने संक्षेपे कह्यो; परंतु वास्तविक जे तत्वविचार छे, ते तो ए बन्नेथी पर छे. केमके मूळतत्वमां तेनो कांई विचार ज नथी. ज्यां भेददृष्टि छे, त्यां ज एवो व्यवहार संभवे छे. अभेददृष्टिमां तो तेवो व्यवहार संभवतो नथी. तदपि ज्यारे ब्रह्मने ज आ जगत्नुं कारण मान्युं अने जगत्ने तेनुं कार्य मान्युं, तो तेमां कारण-ब्रह्म ते सत् चित्त अने आनंदस्वरूप छे ने कार्य-जगत् नाम अने रूप-स्वरूप छे. कह्युं छे के,—

अस्तिभाति प्रियंरूपं नामचेत्यंश पंचकं ।
आद्यत्रयं ब्रह्मरूपं जगद्रूपं ततोद्वयं ॥

भावार्थः—अस्ति (सत्), भाति (चित), प्रिय (आनंद) नाम अने रूप ए पांच अंशो छे. तेमांथी पहेला जे त्रण ते ब्रह्मस्वरूप छे अने अंतना जे बे ते जगत्स्वरूप छे.

सर्वे रूपोनुं चिंतवन करीने तथा तेमनां नामो धारण करीने परमात्मा ज आ जगत्‌ना सर्वांशनेविषे स्थित थएला छे. '**अहं व्याकरवाणी मे नामरूपे**' (हुं आ नाम तथा रूपने प्रकट करुं) एवुं इच्छता थका संकल्पमात्र वडे परमात्मा जगत्‌ने उत्पन्न करता हवा. केमके सर्ग काळनी पहेलां तो '**सदेव सोम्येदमग्रआसीत्**' (हे सोम्य! पूर्वे आ जगत् सत् ज हतुं) ए श्रुतिथी मात्र सत्‌रूप ब्रह्मनुं ज निरूपण करेलुं छे; एटले आ जगत् सृष्टिनी पूर्वे केवळ अव्याकृत ज हतुं ने ते ज नामरूपताथी प्रकट थयुं. नाम अने रूपवाळा पदार्थो नाश पामनारा छे, केमके नाम तथा रूपनो भाश थतो आपणे अनुभवीए छीए. परंतु सच्चिदानंदस्वरूप जे ब्रह्म छे, तेनो नाश त्रणे काळमां थतो कोईए अनुभव्यो पण नथी. जे पदार्थ आदिमां न होय अने अंतमां पण रहेनारो न होय, परंतु मध्यमां ज मात्र भासतो होय तेने सद्रूप केम कही शकाय? न ज कहेवाय. जगत् ए उत्पत्तिनी पूर्वे नहोतुं ने प्रलयकाळे रहेवानुंए नथी; मात्र वर्तमानमां ज प्रतीत थाय छे तेथी ते मिथ्या छे. ब्रह्म तेम नथी. ए तो त्रिकालाबाध्य छे, तेथी सद्रूप छे. माटे जे जे पदार्थो नाम अने रूपवाळा होय तेने मिथ्या समजवा ने तदतिरिक्तने सत्य समजवा. अवकाशदान ए आकाशनुं रूप छे, गति अने स्पर्श वायुनुं रूप छे, दाह तथा प्रकाश ए अग्निनुं रूप छे, द्रवता ए जळनुं रूप छे अने कठिणता ए पृथ्वीनुं रूप छे. औषधी अने शरीरोमां पण ते ते तत्वोनां असाधारण

रूपो छे. एवी रीते अनेक जातनां भिन्न भिन्न नाम–रूपमां सत्-चिद् अने आनंद एतो सर्वत्र एक ज प्रकारथी व्यापी रहेल छे. वास्तविक रीते जोईए तो नाम अने रूप, ए ब्रह्मनेविषे केवळ कल्पित छे; जेवी रीते जळमां परपोटा अने आंखमां पुतळी कल्पित छे.

(कुंडलिया.).

जैसें घटकों कहत घट, माटी कारन जोइ ॥
घट तजि माटीकों कहे, काको कारन होइ ॥
काको कारन होइ, ब्रह्म जग ऐसें जानो ॥
जगतहि ब्रह्म कहात, प्रकट निरुपाधिक मानो ॥
पिता पुत्रसों होइ, पुत्रबिन पिता न जैसें ॥
कारनही मिट जाय, तजे कारजके जैसें ॥ २०१ ॥

कंबुग्रीवादि छे रूप जेनुं अने घट छे नाम जेनुं, एवुं ए घटरूपी कार्य तेनुं मृत्तिका ए कारण छे. हवे तेमांथी घटनां नामनो तथा रूपनो त्याग करीए तो मात्र माटी ज बाकी रहे. त्यार पछी ए नाम-रूप-रहित माटी, ए कोनुं कारण थई शके छे तथा तेनुं कोण कार्य थई शके छे? केमके कार्य-कारणभाव नामरूप उपाधिने लीधे ज छे. तेवी रीते ब्रह्म तथा जगत्नेविषे समजवानुं छे. जेवी रीते माटी छे ते ज घडो छे. घडो माटीथी भिन्न नथी, तेवी रीते जे ब्रह्म छे ते ज जगत् छे; जगत् ब्रह्मथी भिन्न नथी. जेम पिता पुत्रथी ज कहेवाय छे अने पुत्र न होय तो पिता ए कांई ज नथी; केमके कार्यनो त्याग करवाथी कारण मटी जाय छे.

(कवित्त.)

चेतन कहुं जो कछु और जड देखियत ॥
सत्य ऐसो होई जो असत्य और लहिए ॥
आनंदस्वरूप तो कहुं जो शोक जानुं कछु ॥
एक तो कहुं जो दूजो रूप और गहिए ॥
कहुं तो अखंड खंड खंड और होइ कछु ॥
चल और होवे तो अचलहि वाही कहिए ॥
जानी यह वेद सुखदेव नेति नेति कहै ॥
आपको विचार चूपचाप आप रहिए ॥ २०२ ॥

हवे ब्रह्म निर्गुण तथा अद्वैत छे, एवुं प्रतिपादन करे छे.

एक-अद्वैत ब्रह्मथी अतिरिक्त जो कोई जडपदार्थ होय तो ब्रह्मने चेतन गुणवाळुं कही शकाय; परंतु ए निर्गुण ब्रह्मसिवाय बीजुं कांई ज नथी, त्यारे अमुक जड ने अमुक चेतन एवो भेद केम पाडी शकाय? (आथी ब्रह्मनुं अनिर्वचनीयपणुं पण सिद्ध करे छे.) वळी असत्य एवो बीजो कोई पदार्थ होय तो ब्रह्मने सत्य कही शकाय, शोकस्वरूप बीजुं कांई होय तो ब्रह्मने आनंदस्वरूप कही शकाय, द्वैत-बीजुं देखाय तो ब्रह्मने अद्वैत एक कही शकाय, जो कांई खंड खंड होय तो ब्रह्मने अखंड कही शकाय, जो कोई चल पदार्थ दृष्टिमां आवे तो ब्रह्मने अचलनी उपमा आपी शकाय. श्रुति पण कहे छे के,–'यत्रहिद्वैत मिव भवतितादितर इतरं पश्यति।' (जे अवस्थामां आत्मा बीजा जेवो थाय छे, त्यारे ते बीजो बीजाने जोय छे.) परंतु 'यत्र त्वस्य सर्वमात्मैवाभुत्तत्केनकं पश्येदिति'

(जे अवस्थामां आ ज्ञानीने सर्व जगत् आत्मा ज थयुं, तो त्यां शावडे कोने जोय?) ज्यां एवी रीते दृष्टा, दर्शन अने दृश्य ए त्रिपुटीनो अभाव छे, त्यां एक आत्माविना बीजुं कांई ज न होवाथी कोने शुं विशेषण आपी शकाय? केमके अंही एवो भेद ज नथी. 'जे कांई छे ते सर्व आत्मा ज छे' एम श्रुतिमां पण कहेलुं छे; **इदंसर्वं यदयमात्मा।** तेथी वेद पण **नेति नेति** (इति न) आटलेथी ज समाप्त नथी, एम कही बंध थई जाय छे. वास्ते पोते पोताथी विचारपूर्वक समजी चूप ज रहेवानुं छे.

अज तो कहुं जो दूजो औरहिको जन्म कहुं॥
अक्रिय कहुं जो कर्त्ता और कोऊ लहिए॥
कूटवत कहुं जो लोहास्वत होइ कोऊ॥
अंतवंत होई तो अनंत वाहि कहिए॥
स्वप्रकाश कहियें जो दिखाय कहीं और कोऊ॥
ब्रह्म तो कहुं जो जीव ईश और गहिए॥
गुंगो गुड खाय ताको स्वादनां बखान्यो जाय॥
आपको बिचार चूपचाप आप रहिए॥ २०३॥

अन्य कोईनो जन्म थतो जाणुं तो आ आत्माने अज कही शकुं; अक्रिय त्यारे ज कही शकुं के ज्यारे बीजो कोई कर्त्ता जोउं; कूटवत् त्यारे ज कही शकुं के ज्यारे बीजो कोई घडनारो होय; अंतवाळो कोई पदार्थ होय, तो ज आत्माने अनंत कहुं; स्वप्रकाश त्यारे ज कहुं के ज्यारे बीजो कोई प्रकाश देखाय, अने ब्रह्म पण

त्यारे ज कही शकुं के ज्यारे जीव-ईश्वर जूदा मानुं. मुंगो गोळ खाईने मात्र मनमां ज राजी थाय छे, पण तेना स्वादने वखाणी शकतो नथी. तेवी रीते आ आत्मा के जेनो अनुभव थतां मांहेनुं मांहे ज राजी थवानुं छे; कारण के, जे वस्तु अनुभवगम्य होय छे, तेनुं वर्णन वाणीथी थई शकतुं नथी. माटे अंही तो मात्र पोते पोताथी पोताने विचारपूर्वक समजी चूपचाप रहेवानुं छे.

(दोहा.)

ऐसो ब्रह्म अरूप है, ताकों आतम जान ॥
अब तेरे प्रारब्ध नहि, लेश कछु मनमान ॥ २०४ ॥

ब्रह्म एवुं अरूप छे, ते ब्रह्मने आत्मा समजवो. हे शिष्य! ए आत्माने तुं हवे परिपूर्ण समजी चूक्यो छे, माटे तारे हवे प्रारब्धादिक कर्मोनो लेश पण रहेलो नथी, ए निःसंदेह जाण.

(कवित्त.)

सोवत में जैसें देह धरके मनोरथ कोहि ॥
पूत भयो काहूके खिलायो तिन बारेंतें ॥
शिशुता निवार्यो पुनि वेद पढ्यो चार्यो ॥
कुटुंब संभार्यो काका बाबा सास सारेंतें ॥
कहे सुखदेव नाती पूत उपजाये सब ॥
विविध शिखाए पाप पुन्य पूरे पारेंतें ॥
जागतहीं जैसें झूठ सुपनों जनात सारो ॥
तैसें जग जूठ जानें आतम विचारेंतें ॥ २०५ ॥
सोवतहि सुपने मांय जैसें रंक राजा होत ॥
जाग्रतमें लेश ताको भाव नहि देखिए ॥

जैसें वांझपुत्रकों उठायके उराहनेंकी ॥
कौंन कहे बात काके उर अवरेखिए ॥
कहे सुखदेव जैसें गगनकी गंगामांय ॥
फूल अरविंद तासुं सौरभ विशेषिए ॥
तैसें जूठ जगत मांथ जूठोई शरीर जानो ॥
तांके किये कर्म कैसें साचे करि लेखिए ॥ २०६ ॥

आत्माना विचार–ज्ञान थी जगत्‌नो बाध थई जाय छे, ते जणावे छेः—

कोई एक मनुष्ये स्वप्नामां पोताना मनोरथरूपी देहने धारण कर्यो ने ते देहथी तेने पुत्र उत्पन्न थयो. ते पुत्रने लाडकोडथी बाल्यावस्थामां रमाड्यो ने ज्यारे केवळ बाल्यभाव निवृत्त थयो, त्यारे तेने वेदादिक शास्त्रो पण भणाव्यो; अने माता पिता, काका, मामा, सासु ससरा, भाई बहेन–वगेरे कुटुंबने योग्य उमरनो थयो एटले संभार्या अने सहुनुं पालन पोषण करवा लाग्यो. तथा पोताथी पुत्र दौहित्रादि उत्पन्न कर्यां अने तेमने विविध प्रकारनां पाप तथा पुण्यना पाठ भणाव्या. परंतु ज्यारे जाग्यो त्यारे तो ते सघळुं खोटुं हतुं अने स्वप्न हतुं, एम स्पष्ट रीते जणायुं. तेवी ज रीते ज्यारे आत्मविचारवडे अविद्यानां मोहरूपी स्वप्नमांथी जाग्यो, त्यारे सकळ विश्वने मिथ्या समज्यो. वळी स्वप्नाने विषे रंक मनुष्य म्होटी समृद्धि पामी राजा थयो, परंतु जागीने जोतां तो कांई जणायुं नहि. जेवी रीते ‘ वांझणी पुत्रने रमाडती हती ’ एवी वात कोईए कही, परंतु ते वातनी सत्यता कोईना पण अंतःकरणमां

आवे नहि, तथा जेवी रीते आकाशनी गंगामां खीलेलां कमळनी सुगंधी लेवानी वात मनाय पण ते सर्व असत्य ज अनुभवमां आवे छे अने मिथ्या जणाय छे, तेवी रीते आ विश्व पण मिथ्या छे अने तेमां रहेलां आ शरीरो पण मिथ्या छे. आम छे त्यारे तेनाथी थयेलां कर्मोने सत्य शी रीते समजवां ? विश्व, शरीरो तथा कर्म ए मिथ्या छे अने ब्रह्म सत्य छे; तथा जीव अने ब्रह्म ए जूदा नथी, ए वेदांत शास्त्रनो मूळ सिद्धांत छे.

(दोहा.)

ब्रह्मरूप तबही हतो, हतो अज्ञ जब भाइ ॥
ज्ञान भये कछु और नहि, वही ब्रह्मता आइ ॥ २०७॥
भूलेकों समुझावही, वेद और गुरुलोग ॥
कर्त्तासें कोइ और नहि, क्रिया कर्मका जोग ॥२०८॥

ज्यारे तुं अज्ञान हतो त्यारे पण तुं ब्रह्मरूप ज हतो अने हवे ज्ञान प्राप्त थया पछी पण तुं ते ज ब्रह्मस्वरूप छे. ते काळे तारामां ब्रह्मत्व नहोतुं एम नहि अने हवे तारामां ते नविन आवेल छे एम पण नथी. कंठमणिन्यायनी पेठे भूलाई गयेलाने ते बताववुं छे अने ते शास्त्र, वेद, तथा गुरुलोक भूलेलाने बतावे छे. एओ कांई नवुं देखाडता नथी. कर्म तथा क्रिया ए कर्ताथी भिन्न नथी.

भ्रांतिथी भूली गयेलाने केवी रीते बतावे छे, ते दर्शावे छेः—

(कवित्त.)

कोऊ दश चाले गांव, नदी राह बीच परी ॥
तरिके भये ज्यूं पार, एक भ्रम आयो है ॥

जोई गिन देखे सोई आपकों न लेखे कोई ॥
एक अवरेखे बूड्यो, शोक उपजायो है ॥
और कोई पथिक आयो न्यारे समुझाये गिन ॥
दशमो बतायो तब महा सुख पायो है ॥
याही सुखदेव गुरुदेव उपदेश कीनो ॥
तेरोहि स्वरूप फिर तोहि समुझायो है ॥ २०९ ॥

कोई दश माणसोनुं टोळुं पोताने गामथी बीजे गाम जवा नीकळ्युं. पछी रस्तामां एक मोटी नदी आवी, एटले सहुए ते नदीने तरी जवानो ठराव कीधो. सघळाओ तरीने ज्यारे सामे पार गया त्यारे तेमांना एक बुद्धिवंतने विचार आव्यो के, 'आपणे सघळा–दशे पूरेपूरा आवी गया के नहि?' पछी ते गणवा लाग्यो तो (पोताने गण्यो नहि तेथी) नव थया. आथी प्रत्येकने भ्रांति थई के आपणे तो दश हता ने नव केम थया? नक्की आपणामांनो एक जळमां डूबी गयो. आथी चिंतातुर थई गभराया अने एक बीजा गणवा लाग्या, पण ते सघळाओ गणत्रीनो आंक एक ज निशाळे भणेला होय एम लागतुं हतुं. प्रत्येक पोताने लेखता न होता, तेथी बीजा नवना नव ज थता हता. पछी सहु शोक करता पोके पोक रडवा लाग्या. एटलामां कोई भलो अने विचक्षण वटेमार्गु त्यां आवी पहोंच्यो. ते तेमने धीरा पाडी पूछवा लाग्यो, त्यारे तेओमांनो एक बोली उठ्यो,—'भाई! अमो घेरथी दश जणा नीकळ्या हता, तेमांथी नदी ओळंगतां एक जण जळमां डूबी गयो तेथी रडीए छीए.' आ सांभळी वटेमार्गु आश्चर्ययुक्त

संशयमां पडी गयो ने तेणे ते मूर्ख मंडळीने पोताना मनमां प्रथम गणी लई पछी तेमने पूछ्युंः—'भाईओ! तमे हमणां केटला जण छो?' त्यारे एके उत्तर आप्यो. 'नव.' वटेमार्गुए कह्युंः—'भला गणावो तो खरा?' तेथी एक जणे पोतानी असल रीति प्रमाणे गणावतां नव ज थया. आथी वटेमार्गुए धीरे रहीने कह्युंः—'शांत थाओ. तमो शोक तजी द्यो. भाईओ! तमारो दशमो छे.' आ सांभळी सौ ठंडा पड्या ने पूछवा लाग्याः—'तमे तेने क्यां जोयो? ते क्यां भेळो थयो हतो?' वटेमार्गुए कह्युं 'तमे गभराओ नहि; ते दशमो आंहि ज छे. तमो फरीथी गणत्री करो. एटले तेमांनो एक गणवा लाग्यो तो नव थया. कारण के, पोताने गणावेल नहि. एटले वटेमार्गुए तेनो हाथ झाली कह्युं के,—'दशमो तुं छे.' ए सांभळीने ते 'हें हें हं हं' कहीने हसी पड्यो ने पोताने दशमो कबूल कर्यो. सौने एम थयुं के 'दशमो जड्यो.' पछी सौ खुशी थता चाल्या गया. हवे एमांथी दशमो क्यांई खोवायो ज नहोतो; ते छतां भ्रांतिथी सौ शोच करता हता. जेवो खोवायो हतो, तेवो ज जड्यो हतो.

तेवी रीते शास्त्र तथा गुरु तने तारां ज स्वरूपनो बोध करे छे के जेनी भ्रांति थई हती ते पोताने आत्मा मानतो हतो. '**तत्वमसि**' 'ते तूं छे.' ए वाक्यवडे प्रत्यक् अभिन्न ब्रह्मने अपरोक्ष करे छे. ने त्यारपछी ज तेने '**अहंब्रह्मास्मि**' 'हुं ब्रह्म छुं' एवुं

प्रत्यक्ष ज्ञान थाय छे. आ प्रमाणे जे ज्ञान थयुं छे ते कोईपण प्रकारे बाध पामे तेवुं ज्ञान नथी. केमके ए रीते उपजेलुं जे 'ब्रह्म हुं छुं' ते ज्ञान दृढ, अपरोक्ष अने भ्रांतिथी रहित छे, एटले तेमां तेने पछी कांई पण संशय रहेतो नथी.

शिष्य०:—

(दोहा.)

जान्यो आप प्रसादतैं, अपनो आतमरूप ॥
अनुभव कासों कहत है, अरु विज्ञान अनूप ॥ २१० ॥

शिष्यः—हे गुरु! केवळ आपनी ज कृपाथी में पोतानां आत्मस्वरूपने ओळख्युं. एमां हवे मने लेश पण संदेह रहेलो नथी. परंतु हे देव ! ज्ञान, विज्ञान तथा अनुभवनुं स्वरूप शुं छे ते कृपाकरीने कहो.

गुरु:०—

सच्चिद जाने ब्रह्मकों, तबलौं कहियत ज्ञान ॥
ब्रह्म आपहिकों लखे, सो केवल विज्ञान ॥ २११ ॥
जैसें नर अज्ञानतें, कहत देहकों आप ॥
तैसें ब्रह्म लखै जबें, वह अनुभव आलाप ॥ २१२ ॥

गुरुः—हे पुत्र! ज्यांसुधी ब्रह्मने ज मात्र सच्चिदानंद स्वरूप जाणे छे, त्यांसुधीनी जे अवस्था ते ज्ञान कहेवाय छे; अने ए सच्चिदानंदस्वरूप ब्रह्म पोताने ज जाणे छे, त्यारे ते अवस्था विज्ञान कहेवाय छे. अने जेवी रीते अज्ञानताथी 'हुं देह छुं' एम पोताने देह

मानतो हतो, तेवी रीते ज्यारे संदेहरहित दृढभावनाथी पोताने ब्रह्म समजे त्यारे ते अनुभव कहेवाय छे.

शिष्य०:—

मुक्त भयो संशय गयो, लख्यो आपको रूप ॥
देह रही व्यवहारसों, का विधि करे अनूप ॥ २१३ ॥

शिष्य०:—हे गुरु! हवे हुं मुक्त थयो अने में पोतानुं स्वरूप बराबर ओळख्युं; देह ए पण मात्र हवे व्यवहारथी ज रही अने तेने कोईपण कर्मो बाध करी शके तेम नथी. आ मारूं समजवुं बराबर छे के केम?

गुरु०:—

भांति भांति भोगो करे, (वा) रहे दिगंबर होय ॥
पुन्य पाप लागे नहिं, ज्यौं जनकादिक जोय ॥ २१४ ॥

गुरु०:—हे शिष्य! ज्ञान थयाथी कर्मोनो नाश थई जाय छे; कर्मोनो नाश थये व्यवहार निवृत्त थाय छे, व्यवहार निवृत्त थये संसारमांथी आसक्ति जती रहे छे अने आसक्ति गई एटले निर्विकार मनवाळो थाय छे. आमे निर्विकार अंतःकरणवाळो थया पछी चाहे तो विविध प्रकारना भोग भोगवो अथवा अवधूत थई अरण्यमां वास करो! चाहे तो देवपूजन, शौचस्नानादि करो अथवा चाहे तो अति वर्णाश्रमी थई वर्तो! चाहे तो जपतपध्यानादिकमां प्रवर्तो अथवा चाहे तो ब्रह्मानंदनेविषे लय थाओ! ज्ञान थया पछी शरीरमां रहीने ए पोते कांई करतोए नथी अने बीजाथी कांई करावतो-

ए नथी. ए तो सदा अखंडानंदस्वरूपे स्वराज्यनेविषे शुभ आचरणनां अभिमानथी रहित थईने बिराजे छे. कांई कर्त्तव्य बाकी रहेतुं न होवाथी, शरीर रहो के अत्यारे ज पडी जाओ, तेनी कांई ज चिंता नथी. शरीर रही विविध प्रकारना भोग भोगवो तेनो (ज्ञानीने) कांई शोच ज नथी. केमके एवी अवस्था—कृतकृत्यता प्राप्त थएलाने पुण्य—पापादिक स्पर्श करी शकतां नथी. तेथी चाहे तो शुक—भरतादिवत् रहो अथवा चाहे तो जनकादिकवत् रहो! धन्य छे एवा ज्ञानीजनने के जेणे आत्मतत्वनो साक्षात्कार करेलो छे.

न्याय—वैशेषिक.

(दोहा.)

वैशेषिक अरु न्याय वे, दोनौं तार्किक जान ॥
भेदवाद इनमें सदा, भेदपदारथ ज्ञान ॥ २१५ ॥

न्यायशास्त्रना बे भेद छे. एमां प्रथम न्याय जे छे ते महामुनि गौतम प्रणित छे. आ शास्त्र विशेषे करीने वादविवादना तत्वनुं निर्णायक छे ने तेथी ज तेने न्याय कहे छे. एमां सोळ पदार्थो छे, जेवा के,—१ प्रमाण, २ प्रमेय, ३ संशय, ४ प्रयोजन, ५ दृष्टांत, ६ सिद्धांत, ७ अवयव, ८ तर्क, ९ निर्णय, १० वाद, ११ जल्प, १२ वितंडा, १३ हेत्वाभास, १४ छळ, १५ जाति अने १६ निग्रहस्थान. ए सोळ पदार्थोनुं उद्देशलक्षण अने परीक्षा, ए तत्वज्ञान थये मिथ्या ज्ञाननो नाश थाय छे, मिथ्या ज्ञाननो नाश

थये दोष मटे छे, दोषना मटवाथी प्रवृत्ति अटके छे, प्रवृत्तिना अटकवाथी जन्म टळे छे अने जन्मना टळवाथी त्रणे प्रकारनां दुःखनी आत्यंतिक निवृत्ति थाय छे. त्रण प्रकारनां दुःखनी आत्यंतिक निवृत्ति ए ज परम पुरुषार्थ अने मोक्ष छे. बीजुं न्यायशास्त्र के जेने वैशेषिक शास्त्र कहे छे, तेना कर्त्ता भगवत् कणादमुनि छे. तेमनुं कहेवुं एवुं छे,--के महामुनि गौतमे जे बोध कर्यो छे ते उपदेश यथार्थ छे. आत्मज्ञाननी सिद्धिमां प्रतिकूळ जे त्रण प्रकारनुं दुःख तेनो नाश करवानी जरूर छे. आत्म साक्षात्कारने वास्ते पदार्थज्ञानना विवेकनी जरूर छे, पदार्थोनो विवेक वर्गीकरण—विभाग पाडवाथी थई शके छे; विभाग साधर्म्य-वैधर्म्यना ज्ञानथी थाय छे. तेथी ज्यारे आपणे ए सोळ पदार्थोनां साधर्म्य-वैधर्म्य मेळवीए छीए त्यारे ते सोळ पदार्थोनो सातमो अंतर्भाव थाय छे. ते जेवा के,–द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अने अभाव. ए बन्ने शास्त्रो आत्माना बे प्रकार माने छे; जीवात्मा तथा परमात्मा. एक संसारीने एक नित्यमुक्त माने छे. नित्यमुक्त सर्वज्ञ ने सर्वकर्त्ता ते ईश्वर ए एक छे; अने संसारी, अनित्य ज्ञानवान्‌ने असर्वज्ञ ने असर्वज्ञ ते जीव, तेओ अनेक छे. आथी तेओ भेदवादी छे. ईश्वरनुं प्रणिधान करवाथी जीवात्माने पदार्थोनुं यथार्थ ज्ञान थाय छे ने तेथी ईश्वरकृपाए करीने ज्ञानाधिकरण आत्माने भौतिक बंध छूटी, अध्यात्मस्वरूपे स्थिति थई, त्रण प्रकारनां दुःखनी आत्यंतिक निवृत्ति

थाय छे. त्रण प्रकारनां आत्यंतिक दुःखनी जे निवृत्ति ते ज मोक्ष छे.

सांख्य.

(दोहा.)

प्रकृति पुरुष अरु तत्वको, नीको होइ विवेक ॥
सांख्य मुक्ति याकों कहे, ज्ञान भये सब एक ॥ २१६ ॥

सांख्यशास्त्रकार भगवान् कपिलमुनिए एवो बोध करेल छे के,- पूर्वशास्त्र न्याय तथा वैशेषिककाराेए जे पदार्थ विभाग पाड्यो छे, ते जोईए तेवो सूक्ष्म नथी. केमके ज्यारे तमारो मत एवो छे के पदार्थ विभागमां लाघवता थवी जोईये तो साधर्म्य-वैधर्म्यवडे करीने जे विभाग करेलो छे ते गौरवग्रस्त छे; तेथी सकळ विश्व जड तथा चेतनात्मक छे. तो तेना ए बे ज विभाग पाडवा अने जड-प्रकृति तथा चेतन-पुरुष एवां बे ज तत्वो मानवां उचित छे. प्रकृति जड छतां, पुरुषना भोग अने अपवर्गने माटे प्रवृत्त थाय छे. लोहचुंबक पासे रहेवाथी जड छतां जेम लोह व्यापारवाळुं थाय छे, तेम चैतन्यमय पुरुष सन्निधान रहेवाथी प्रकृति जड छतां पण व्यापारवाळी थाय छे. प्रकृति अने पुरुषनो संबंध अंध पंगुनी पेठे छे. प्रकृति भोग्य होवाथी ते भोक्ता पुरुषनी अपेक्षा राखे छे अने पुरुष त्रण प्रकारनां दुःखनो अत्यंत नाश करवा कैवल्यनी अपेक्षा राखे छे. ए कैवल्य प्रकृति-पुरुषना विवेकने आधीन होवाथी पुरुष तथा प्रकृतिनी अपेक्षा राखे छे. पुरुष तथा प्रकृतिना वि-

वेकनुं ज्ञान थवाथी त्रण प्रकारनां दुःखनी आत्यंतिक निवृत्ति थाय छे, अने पुरुष चिन्मात्र अवस्थिति करी निवृत्त थाय छे. प्रकृति-पुरुषना विवेकनुं जे ज्ञान ते ज मोक्ष.

पातंजल योग.

(दोहा.)

जीव ईश न्यारे कहे, पातंजल सब काल ॥
दहै देहको जोग कर, यही मुक्ति सुखलाल ॥ २१७ ॥

भगवान् पतंजलीनो मत एवो छे के, पुरुष नाना तथा चिन्मय छे. ए वात बराबर छे, परंतु **क्लेशकर्म विपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुष विशेषईश्वरः** 'क्लेश, कर्म, विपाक अने आशयनो कालत्रयमां पण जेनेविषे गंध नथी ते पुरुषोत्तम ईश्वर छे,' एम मानवुं जोईए. केमके पुरुषने प्रथम बंध हतो ने पछीथी मुक्त थएल छे. वास्ते कोई विशेष पुरुष एवो मानवो जोईए के जेने त्रणे कालमां बंध न होय. ते ज ईश्वर छे. तेनो वाचक प्रणव छे. तेनो ज जप अने तेना ज अर्थनी भावना करवी; तेथी प्रशांतवाहिता वृत्ति थाय छे. ते थवामाटे मनोराज्यने अटकाववा चित्तवृत्तिनो निरोध अवश्य करवो जोईए, के जेथी द्रष्टानुं स्वरूपमां अवस्थान थाय. अभ्यास तथा वैराग्यवडे तेनो (चित्तवृत्तिनो) निरोध थाय छे. वृत्तिनो निरोध थवाथी सर्व व्युत्थाननो बाध थई विवेकख्याति उपजे छे; विवेकख्यातिनी द्योतक अलौकिक विभूतियो प्राप्त थाय छे, ने तेथी गुणोनो

प्रतिप्रसव (जे क्रमथी उत्पन्न थएल ते क्रमथी पुनः स्वकारणमां लीन थवुं ते प्रतिप्रसव कहेवाय छे) थाय छे; ने स्वरूप प्रतिष्ठित चिन्मात्र योगीजनो थाय छे.

मीमांसा.

(दोहा.)

यज्ञादिक कर्मो करे, करे स्वर्ग सुख भोग ॥
मीमांसक समुझी कहे, दुखको भयो वियोग ॥२१८॥

पूर्वमिमांसाकार भगवान् जैमिनीनो एवो मत छे के, वेद छे ते ज ब्रह्म छे; माटे वेद विदित अश्वमेधादिक यज्ञोने विधिपूर्वक करे अने तेथी उत्पन्न थतां अक्षय स्वर्गादिक सुखोने भोगवे. अनादि, अनंत, अपौरुषेय तथा अबाधित अनधितार्थगमक वेद छे. ते वेदनुं ज शरण लेवाथी, तत्वबोध थयाथी एकना ज्ञाने सर्व विज्ञात थशे. वेद ज सर्व विज्ञाननी खाण छे. तेनो विधिवत् अभ्यास करवो तथा तेणे प्रेरेला धर्म-कर्मनुं परिपालन करवुं, ए परिपालनाथी कृतकृत्य थवाय छे. अथवा वर्णाश्रमधर्म-कर्म करतांथको संस्कारोवडे संस्कृत थई ब्रह्मसायुज्यने पामे. कर्मोनो अपूर्व संचय करी उत्तम थई स्वर्गमां बिराजे. स्वर्ग जे के दुःखथी रहित अने सुखनुं आस्पद-स्थान छे. विविध प्रकारनां कर्मोथी प्राप्त थयेलुं सुखास्पद जे स्वर्ग ते ज मोक्ष छे.

विविध शास्त्रसिद्धांत.

वेदांत.

(दोहा.)

जीव ईश अरु जगतकों, आतम जाने सोइ ॥
मनमें आवे तांह रहे, ताहि न करनों कोइ ॥२१९॥
कह्यो विचारीके सबे, सब सिद्धांती सार ॥
सबे समुझनां आपकों, सबमें आप निहार ॥२२०॥

जीव, ईश्वर अने जगत्, ए सर्व आत्मस्वरूप ज छे. आत्मतत्वथी कांई भिन्न नथी, एम जेणे निजांतरनेविषे निश्चय करेलो छे ते पछी गमे त्यां गमे तेवी स्थितिमां रहे; केमके पछी तेने कांई कर्त्तव्य रहेतुं नथी तथा सर्व भूतस्थमात्मानं सर्व भूतानिचात्मनि ए भगवद्वचनानुसार पोताने सर्वत्र तथा सर्वने पोतानेविषे जोय, ए सर्व वेदांतसिद्धांतनो सार छे: ते तने संक्षेपे कह्यो. श्रुतिमां एम ज कहे छे के,–'ब्रह्मैवेदं सर्व सच्चिदानंद मात्रं' 'आ सर्व जगत् सच्चिदानंद मात्र ब्रह्म ज छे;' तेथी ए विषयने श्रुति, युक्ति तथा अनुभवथी दृढ कर. ज्यारे तने एवो दृढ निश्चय सत्शास्त्र तथा सत्पुरुषोना समागमथी थशे त्यारे ज तुं ज्ञान पामीने संसारना बंधनथी मुक्त थईश.

गीता.

(दोहा.)

लौकिक वैदिक कर्मकों, ज्ञान भये किय जाय ॥
देख कर्म जाके सकल, विश्वधर्म ठहराय ॥२२१॥

जैसें जब अज्ञानमैं, चलत हतो जारीत ॥
तैसी विधि अबहुं चले, तजे कर्मसों प्रीत ॥२२२॥

"श्रीमद्भगवद्गीता" नो मूळ आशय एवो छे के ज्ञान प्राप्त थयापछी पण लोकसंग्रहने वास्ते लौकिक तथा वैदिक कर्मो करता रहेवुं. तेथी बे हेतु जळवाय छेः-एक तो पोताने नास्तिकतानो दोष न आवे ते अने बीजो परंपरा बगडे नहि ते. वळी मोटा पुरुषोनां आचरणनुं अनुकरण सघळा लोको करे छे, माटे ज्ञान प्राप्त थयुं होय तो पण उत्तम प्रकारनुं शास्त्रविहित आचरण राखवानी जरूर छे; तेम ज लौकिक प्रनाळीनी मर्यादा पण जाळववी जोईए. माटे जेवी रीते अज्ञानदशामां व्यवहारिक कर्मो करता हता, तेवी ज रीते ज्ञानप्राप्तिनी दशामां पण सघळां कार्यो करता रहेवुं. परंतु मात्र कर्मोनेविषे स्त्री, पुत्र, पशु, धन, जन, जमीन, घर तथा कुटुंब अने ईष्ट मित्रो,-ए आदिकनेविषे पद्मपत्रवत् निर्लेप रहेवुंः एटले के तेओनी साथे रहेतां छतां पण अनासक्त रहेवुं. एथी पोतानुं पण कल्याण थाय छे अने उपर कहेला दोषो लागवानो पण समय आवतो नथी.

(दोहा.)

आगम मंत्र पुरान पुनि, पंच रात्र मत जान ॥
खैंचे अपने पक्षकों, जगमैं डारत आन ॥ २२३ ॥
और शास्त्रके बहु मतों, परे जगतमैं जाय ॥
कोटि कल्प छूटे नहिं, जन्म मरन भय ताय ॥ २२४ ॥

अपनो मत यह भेदसों, सबसों उत्तम जान ॥
ताहीको विश्वास करि, भूलि और मतिमान ॥ २२५ ॥

मंत्रशास्त्र, पुराणो, पंचरात्र, शैव, वैष्णव, ए आदिक अनेक मतमतांतरो विश्वनेविषे प्रवर्त्ते थएला छे अने सौ पोतपोतानो पक्ष करीने मनुष्यवृत्तिने पोताना मत तरफ खेंची खेंचीने ते मनुष्योनां जीवतरने खराब करे छे; केमके आत्मतत्वनां ज्ञानविना मुक्तिलाभ कोटि जन्मपर्यंत पण मळे तेम नथी. ने जन्म मरणनो भय पण तेविना छूटे तेम नथी. ते ते देवनी उपासना करवावाळाओ ते ते देवना लोकने पामे छे, परंतु एथी कांई मोक्षप्राप्ति थती नथी. मोक्षनी प्राप्ति तो मात्र आ जे आपणो वेदांत मत छे, तेथी ज थनार छे. वास्ते भूले चूके पण कोई काळे मत मतांतरवाळाओनो विश्वास करीश नहि. सघळाथी उत्तम तो मात्र वेदांत मत ज छे, माटे तेनो तुं सुदृढ विश्वास राख.

धूर्त नास्तिकादिक शठों, वेदविरोधी और ॥
भूलि न तिनैं सुनाइयें, यह मत मत शिर मोर ॥ २२६ ॥
जिनके उरु हरिभक्तता, गुरूभक्तता जान ॥
तिनके आगे खोलियें, यह उपदेश निदान ॥ २२७ ॥
लक्ष करोरी ग्रंथमैं, जो कहि गये विचार ॥
सो मत सब संक्षेपसैं, भाषा मांहि निहार ॥ २२८ ॥

वळी केटलाक धूर्त, नास्तिक, शठ अने वेदविरोधी बीजा जैन, बौध, चार्वाक, कापालिक,-ए आदि केटलाकना जूदा जूदा मतो छे.

तेमना फंदमां पण कोई काळे फसातो नहि अने आ वेदांतमत के जे अन्य मतोनो शिरोमणी छे, ते तेवा नीच लोकोने भूलथी पण कदी संभळावीश नहि.

जेना अंतःकरणमां हरिभक्ति तथा गुरुभक्ति होय, तेमना पासे ज आ सदुपदेशनां पानां खोलजे. लाखो अने करोडो ग्रन्थमां जे वातनो विचार घणा विस्तारथी कहेल छे, ते सघळो विचार भाषामां ज संक्षेपे कह्यो छेः स्थिर मनथी तेनुं तुं अवलोकन कर.

जैसें सांभर नौनके, ढेर शैलसम जोय ॥
लीजें पैसा एकभर, कारज अपनो होय ॥ २२९ ॥
वेदस्मृतिके वचनका, किय सुखदेव विलास ॥
यह "अध्यात्मप्रकाश" तैं, होवत आत्मप्रकाश ॥२३०॥
हतो जानवो जो कछु, जान गयो तुं सोई ॥
और शास्त्रके मतनकों, भूले पें मत जोइ ॥२३१॥

जेवी रीते मीठांनो एक पहाड पड्यो होय तो तेथी कांई फळ नथी; मात्र जेटलांथी-एक पैसाभारथी ज जो आपणुं कार्य बनतुं होय तो तेटलुं ज लई लेवुं. वधारे लेवाथी शुं फल?

वेद तथा स्मृतिनां वचनोनो श्री सुखदेवजीए आ एक विलास मात्र करेलो छे. ए विलास जे के आ "अध्यात्मप्रकाश" ग्रंथ छे, तेथी आत्मप्रकाश थाय छे, ए निःसंदेह कथन छे. हे शिष्य! जाणवानुं जे कांई हतुं ते सघळुं तें हवे जाणी लीधुं छे, तेथी हवे मोहवश थई बीजां शास्त्रोना मतो तरफ भूले चूके पण जोईश मां.

मात्र आ शास्त्रनुं निरंतर सेवन कर के जेथी आ भवसागरना पारने सुखपूर्वक पामीश. किं बहुना?

(कवित्त.)

नरसौं न जन्म और धर्म वेद शासनसौं ॥
विप्रसौं न वर्ण अरु आश्रम न गेहीसौं ॥
कर्मसौं न प्रबल और विषयलंपटसौं न खल ॥
जरासौं न भरम नां भूलैया औरतेहीसौं ॥
गुरुसौं न वैद उपचार नां विचार जैसो ॥
अज्ञसौं न रोगी औ असंयमी न एहीसौं ॥
मनसौं न अपकारी बुद्धिसौं न देहधारी ॥
देहसौं न देहरा, न देव और देहीसौं ॥ २३२ ॥

नरथी उत्तम कोई जन्म नथी, वेदशासनथी उत्तम कोई धर्म नथी, विप्रथी उत्तम कोई वर्ण नथी, गृहस्थाश्रमथी उत्तम कोई आश्रम नथी, कर्मथी कोई प्रबल नथी, विषयलंपटथी विशेष कोई खल नथी, वृद्धावस्थाथी विशेष भ्रम नथी, स्त्रीशरीरथी विशेष कोई भूलवणी नथी, गुरुसमान कोई वैद्य नथी, विचार बराबर कोई उपचार नथी, अज्ञानीना जेवो कोई रोगी तथा असंयमी नथी, मनथी वधारे कोई अपकारी नथी, बुद्धिना बराबर कोई देहधारी नथी, देहना समान कोई देवळ नथी अने देही-आत्मा समान कोई देव नथी.

(दोहा.)

संवत संत्तरसो बरष, पचपन आसौंमास ॥
एकादशी बुध शुक्लमैं, पूरन भयो विलास ॥ २३३ ॥

संवत १७५९ ना आशो सुदी ११ ने बुधवारने दिवसे श्री सुखदेवजीए ग्रन्थरूपी कार्य समाप्त कर्युं; अने—

(दोहा.)

गुण भूतों रस ईशमय, विक्रमकी शुभ साल ॥
आश्विन शुक्ला पंचमी, रविदिन लिखी विशाल ॥ १ ॥
श्री काशी स्थल गंगतट, गुहा बनी आनंद ॥
कर निवास नरसिंह व्हां, रटत नाथ सुखकंद ॥ २ ॥

३ गुण, ५ भूत, ९ रस, अने १ ईश तेने "अंकानां वामतो गति" 'अंकोनी गणत्री डाबी बाजुथी करवी' एटले विक्रम संवत १९५३ ना आशो शुद्धि ५ रविवारने दिवसे, आ विशाला नामनी टीका, श्री काशीपुरीमां गंगाजीनां तट उपर आवेलां 'आनंदगुहा' नामनां स्थानमां निवास करी श्री नृसिंहशर्माए, आनंदस्वरूप श्री नाथगुरुनुं रटण करतां संपूर्ण करी.

(पद–धन्याश्री–काफी.)

त्रेपद गए तत्वमसिको विचार. (टेक.)
तत्पद ईश्वर त्वंपद जीव हि, असिपद ब्रह्म निहार ॥ त्रि० १
शुद्ध निरंजनमें जग कलिपत, क्यौं डरपत हो गमार ॥ त्रि० २
आतम अखंड स्वरूप तिहारो, 'यह' 'मम' भेद निवार ॥ त्रि० ३
निजहिमैं निज भूलि रह्यो है, निजसौं निजकौं संभार ॥ त्रि० ४
तुं सबमैं सबही तुज भीतर, व्यापक एक अपार ॥ त्रि० ५
तुं सच्चिदघन ज्योतिस्वरूपी, आनंदघन जगसार ॥ त्रि० ६
नाथकृपा नरसिंह बनावे, तब भवजल होई पार ॥ त्रि० ७

(दोहा.)

श्री माजी कीनी कृपा, दीनो ग्रंथ निकार ॥
जनहित उन टीका लिखी, पढ कर करो विचार ॥ १ ॥

श्री आनंदगुहानां पुस्तकालयमांथी आ ग्रंथ कृपाकरीने परोपकारनेवास्ते परमकृपाळु पूज्यपाद श्री माजी महाशयाए कहाडी आप्यो, तेनी जनहितार्थे टींका लखी छे, जे वांचीने सुज्ञजनो विचार करो.

इति श्री सनातन योगधर्मोद्धारक पूज्यपाद ब्रह्मविद्वरिष्ठ श्रीमन्नत्थुराम शर्मणः शिष्येण नृसिंह शर्मणाविरचितायां गुर्जर भाषायां विशालाख्या टीका समाप्ता ॥

॥ श्री ॥

आध्यात्मिक वैद्यलीला.

(चोपाई.)

वैद्य०—

वैद्य एक पंडित अति भारी । ठाडो सबसों कहत पुकारी ॥
जैसो रोग होइ है जाको । तैसो औषध देहौं ताको ॥ १ ॥

रोगी०—

यह सुनि एक गयो तिहि नेरे । कैसो बल औषधको तेरे ॥
मेरे व्यथा बढी अति भारी । औषध द्यो कछु शोच बिचारी ॥ २ ॥

वैद्य०—

तेरे रोग कहा है भाई । जाको औषध देउं बताई ॥

रोगी०—

पापकर्म अधिक हम कीने । महा दुःख तिहि रोगन लीने ॥ ३ ॥
विषय विषहि तन रह्यो छवाई । भवभू वेगतैं देहु छुडाई ॥
धरि यह देह कछू नहि कीनो । कृष्णचरण चित कबहि न दीनो ॥४॥
विषय स्वादमहिं रह्यो भुलाई । झूठे सुखमहिं आयु गमाई ॥
दुख पायो जहां तहां चित दीनो । अब पावत हौं अपनो कीनो॥५॥
ऐसें मोहजाल मोहे घेरो । महामाया मम सब सुख हेरो ॥
जिनकों में समुझत मन अपने । वे सब भरे रैनिके सपने ॥ ६ ॥
गज तुरंग सेवक सुत नाती । जागि परे पर किया न बाती ॥
राजपाट सुख संपत झूठा । वहि सब मिल आतमधन लूटा ॥ ७ ॥
मात तात अरु बांधव दारा । मृगजल सम जानत परिवारा ॥
कबहि मोह मूर्छेना न भागी । मृषा समुझ जावत नहि त्यागी ॥८॥

(दोहा.)

एते पर चंचल चपल । समुझत नहि मन मोर ॥
देखि देखि होवत मुदित । विषय मेघ जिम मोर ॥ ९ ॥

(चोपाई.)

डूबत मोह सिंधुकी धारा । काढि दया करिके मोहे पारा ॥
हौं अति दीन महा दुख पावत । लोक कुटुंब मोहे नहि भावत ॥१०॥
जो जो मुख जोवत है मेरो । तिनमें कोउ न पावत नेरो ॥
मेरी बात सुहात न कोहा । तातैं उपजत है उर दोहा ॥ ११ ॥
भयो हीन बल बुद्धिहु नाठी । तहां सहाय भई कछु लाठी ॥
झूठे कुटुंबहिके रंग भीनो । सांचे प्रभुसौं चित्त न दीनो ॥ १२ ॥
कहां लग कहौं मूढता अपनी । ढांपि लियो मायाकी चपनी ॥
हमरी बूझ न जानत कोऊ । दधि सम जात बिलोया लोहू ॥१३॥

(दोहा.)

नैन कर्ण कर चरण तन । और गिरा मुख दंत ॥
बुद्धि घटी तन गति मटी । तृष्णाको नहि अंत ॥ १४ ॥

(सोरठा.)

मन लाग्यो अति झूठ । सौ तजि सांचहिं मुख मुरि ॥
छांडि सुधासम सूख । फलन जोइ गहि विषसुरि ॥ १५ ॥

(चोपाई.)

ज्यौं ज्यौं तन अति जीर्ण भयो है । त्यौं त्यौं लोभ रोग निगर्यो है ॥
क्रोधरूप ज्वरसैं तन तातो । शिरमैं फिरत मोह मद मातो ॥ १६ ॥
विविध काम फारत नित छाती । हृदय मानमयि शूल घुमाती ॥
मद मत्सरमय भयो त्रिदोषा । दंभ दर्प मल रुधिरहि शोषा ॥ १७ ॥
राग द्वेष तन बल हरी लीनो । क्षीण वीर्य असुयादिक कीनो ॥
यह विध रोग आय कर घेरो । हरत प्राण क्षण क्षण प्रति मेरो ॥१८॥
अब तुम जतन करो चित लाई । तातैं कछु इक होइ सराई ॥

वैद०—

तबहि बैद तासौं यहु बोले । करो जतन दुखमैं मति डोले ॥ १९ ॥

इंद्रिय निग्रह जो पथ करहि । त्रिय इमली जो मन परहरहि ॥
विषय खटाइ रंच मति खाई । स्नेह वस्तुके पास न जाई ॥ २० ॥
इतनी कही जु अनुग्रह कीनो । ताको कर निज कर गहि लीनो ॥
नाडिहि देखत शीश डुलायो । रह्यो अपथ्थ कियो मन भायो ॥ २१ ॥
समय गमाय दिया हि अनेका । काज तुमार बिगरगिय छेका ॥
रंग मनोरथ करत विचार्यो । हरिकों मींत कबहू न संभार्यो ॥ २२ ॥

(दोहा.)

विषय जुहा खेलत रह्यो । कबहु न मानी हारि ॥
पियो जुं मदिराको सबी । शुद्धि गई विसराह ॥ २३ ॥

(चोपाई.)

मत्त भयो अवनवो संझारत । छिन छिन विषय धूरि शिर डारत ॥
त्रिगुन मोहकी लगि तोहि बाता । तासौं उपज्यौं है सनिपाता ॥ २४ ॥
अधिक त्रिदोष बढ्यो तव तनमैं । तम रज बसत निरंतर मनमैं ॥
तिनकों और जतन नहि कोई । श्रीसुखदेव कह्यो है सोई ॥ २५ ॥
कीर विश्वास बचन सुन मेरो । रोग रहे तौ गुन नहि तेरो ॥

रोगी०—

तब रोगी बोल्यो सुन भाई । तातौं मेरि वेदना पाई ॥ २६ ॥
अब मैं शरन गही है तेरी । तौहि लाज सब बातकि मेरी ॥
तुम अति गुनी दूनि सब जानै । करो उपाई जोइ मन मानै ॥ २७ ॥

(दोहा.)

पंडित शोच बिचारिके । करन लग्यो उपचार ॥,
जैसें वेगिहि जाइ तरि, यहु दुस्तर संसार ॥ २८ ॥

(चोपाई.)

जड वैराग वृक्षकी लावहु । सौंठ तोष आननि हि मिलावहु ॥
मीरिच तितिक्षा करुना चिंता । निस्पृह पीपर मेलहु मिंता ॥ २९ ॥

कोमलता सबसी ज गिलोई । मधुपानी सौं लेहु समोई ॥
हर्र आंवले शुचि मेलाया । तातें निर्मल होवहि काया ॥ ३० ॥
अस गंधक आसन दृढ करनां । चिंतामणि चिंता परहरनां ॥
मुसरी सौंफ अजवाय न जीरा । ग्यान ध्यान जपजोग सुधीरा ॥ ३१ ॥
शांति मृगांक विना सुख नांहि । पांच लौंग मिलवो तामांहि ॥
भगवतधर्म धातु सब लीजें । नाम सुधारसकी पुट दीजें ॥ ३२ ॥
ये औषध सब आन मिलावो । ज्ञान ऊखलिमांहि कुटावो ॥
हृदय हांडिमें राखि चढावो । चैतन आंच करी औटावो ॥ ३३ ॥
निर्मत्सर चपनी ढपि लहिऐं । श्रद्धा करछी फेरत रहिऐं ॥
हस्तक्रिया जबहि बनी आवे । जो बहु सतसंगतकों पावे ॥ ३४ ॥
पुनि ले प्रेम चबकमैं कढाडे । भूमी गरवीमैं लेइ गाडे ॥
प्रात कृपाबल जलसौं पीवे । रोग जाय अरु जुगजुग जीवे ॥ ३५ ॥

(दोहा.)

नारदादि प्रहलाद ध्रुव । कीनो यहै विचार ॥
या जुगमें या रोगको । यही सिद्ध उपचार ॥ ३६ ॥
अब ताहैं कैतर गये । याही औषध खाय ॥
तातें देर न कीजिऐं । बेगिहि करो उपाय ॥ ३७ ॥
मनके समुझनको कह्यो । अद्भुत वैदक ज्ञान ॥
जन्मनके सब रोग ध्रुव । सुनतहि करे प्रयान ॥ ३८ ॥
श्रीसुखदेव करी यहीं । शोधी करहुं प्रकाश ॥
नाथ कृपा नरसिंहकों । पूरन करहि निराश ॥ ३९ ॥
ग्रंथ सुहा आनंदसें । पायो करत विलास ॥
जगजनहित प्रकटित कियो । और नाहिं कछु आश ॥ ४० ॥

अत्युत्तम नवमीन ग्रन्थो.

साहित्यसंग्रह—कवि गंग, गिरधर, वगेरे १४४ नामांकित कविओनी नवरसयुक्त सरस कविताओनो संग्रह. मोटां रॉयल पृष्ठ ४६८ पाकुं सोनेरी नाम साथनुं पुठुं. किं० रु० २। पोष्टेज रु० .)≡

अध्यात्म-भजनमाला—आनंदघन, कमाल, कबीर, गोरख, चिदानंद, सद्दचिदानंद, ईत्यादि ११६ भक्त कविओए रचेलां ६०० पद—कीर्तनोनो संग्रह करवामां आव्यो छे. पृष्ठ २६० किं० रु० १॥ पोस्टेज रु० .)=

कहानकाव्य—आ काव्यग्रन्थमां प्रभुप्रार्थना, मनने उपदेश, इत्यादि बाबदोपर जुदा जुदा छंद, पद, गरबा, इत्यादिनो संग्रह करवामां आव्यो छे. किं० रु० १। पोस्टेज रु० .)=

छोटमकाव्य—नवरात्री वगेरे प्रसंगे सुरत, वडोदरा तरफ गवाता रसिक गरबा, पद, छंद, संगीत इत्यादि. किं० रु० .॥. पोस्टेज एक आनो.

संतोषशतक—संतोष सद्गुणना महिमाविषे व्याख्यान तथा टीका. सुज्ञ ईश्वरलाल दवेना चित्र-चरित्र ई. साथे. किं० रु० .।. पोस्टेज एक आनो.

अध्यात्मप्रकाश—आ ग्रंथ. किं०रु० .॥= पोस्टेज एक आनो.

श्रीरामगीता भाषांतर—मूळ गुरुमुखीमांथी पद, पदार्थ तथा भावार्थ साथे विवेचनकर्त्ता महात्मा श्रीहरिकुंवरबाई. उपनाम श्री माजी महाराजनी छबी तथा चरित्र साथे. किं० रु० .।॥. पोस्टेज एक आनो.

परमपदबोधिनी—योग, सांख्य, भक्ति अने वेदांतनी समज

आपनार उत्तम ग्रन्थ. महात्मा श्री नथुराम शर्मानां चित्र-चरित्र साथे. मूल्य रुपियो १। पोस्टेज एक आनो.

सुभाषितलहरी—भारतमार्तंड, वेदांत भट्टाचार्य, गोलोकवासी शीघ्र कवीराज श्रीगट्टूलालजीकृत समश्लोकी गीता तथा तेमनां चित्र-चरित्रसाथे. किं० रु० १ पोस्टेज एक आनो.

श्रीसुदामामहात्म्य-चित्र साथे, किं० रु० .॥ पोस्टेज एक आनो.

आर्याचरित्रावली—संयुक्ता, कान्ता, चंदा, पद्मा, सरदारबा, कूर्मदेवी, कृष्णाकुमारी, वीरमती, रूपमती, मृगनयनी, जोधबाई, बैजाभाई, मीरांबाई, झांसीनी राणी, गुन्नौरनी राणी,—वगेरे घणी शूरवीर स्त्रीओनां अपूर्व वृत्तांतोनो संग्रह. किं० रु० .॥। पोस्टेज एक आनो.

चोराशीआसन—हठयोगनी प्रक्रियाओ अने मुद्राओसहित ८४ सुंदर चित्रो. किंमत रु० १. पोस्टेज एक आनो.

श्रीसदाशिवविवाह—जूनागढना नामांकित कविराज दीवानश्री रणछोडजीकृत कवितारूप. पुष्कळ चित्रोसाथे. किंमत रु० .॥।. पोस्टेज एक आनो.

दीपोत्सवी अथवा दिवाळी—निबंधरूपे पृष्ठ १६ किंमत अर्धो आनो. पोस्टेज अर्धो आनो.

श्रीशैलसुतास्तोत्र—किंमत अर्धो आनो. पोस्टेज अर्धो आनो.

मारूढोला नाटक—मूल्य मात्र पोस्टेज साथे. रु० .।=

वासवदत्ता—प्रसिद्ध सुबंधुकविकृत संस्कृत आख्यायिकानुं भाषांतर. पोस्टेज साथे किं० रु० .)≡